मृतप्राय नदी

इमैन्यूएल थिओफ़िलस

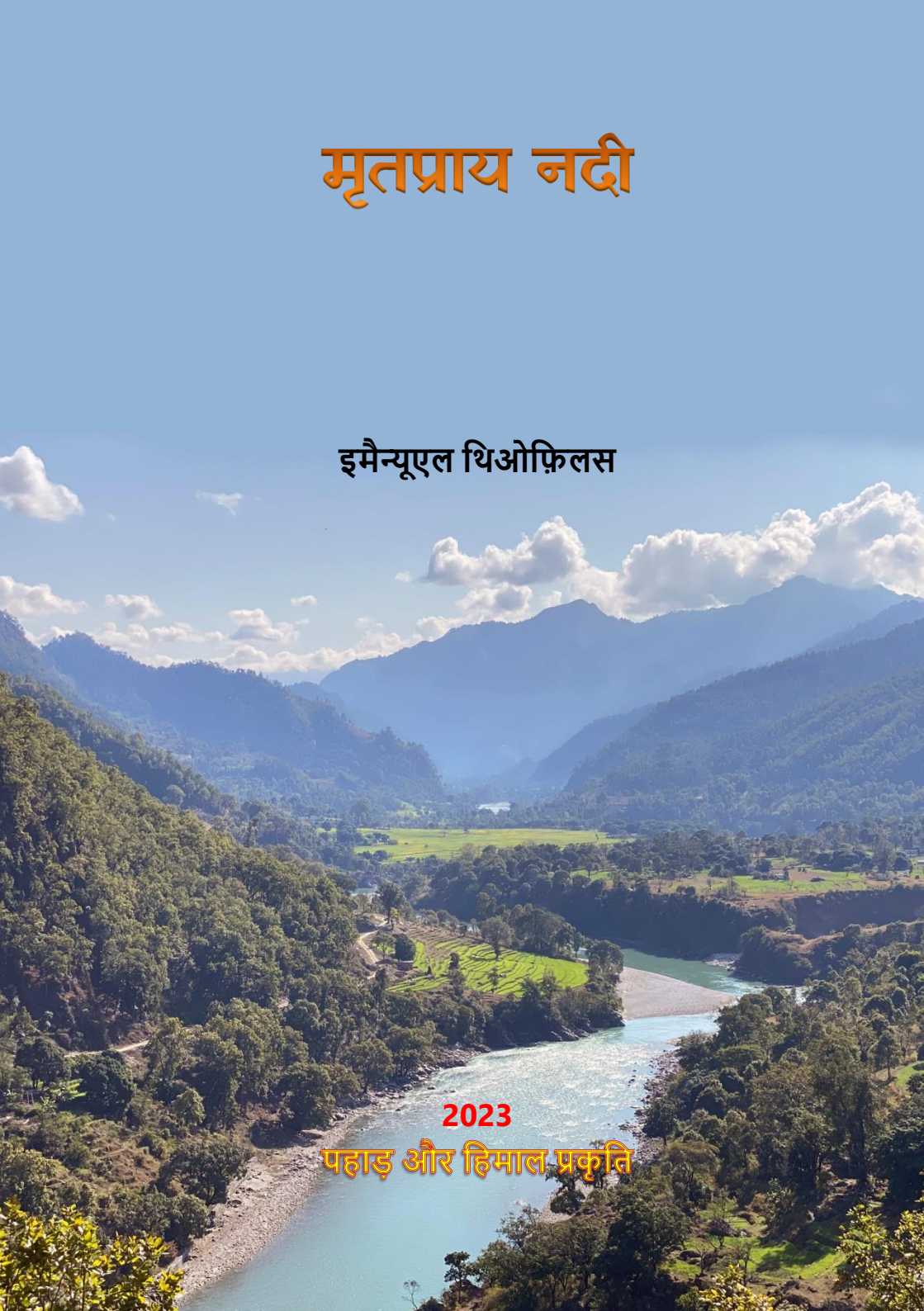

2023
पहाड़ और हिमाल प्रकृति

महाकाली का सौन्दर्य (फोटो: थिओ)

मृतप्राय नदी

इमैन्यूएल थिओफ़िलस

हिंदी अनुवाद: रमेश पाण्डे

Himal Prakriti
A Trust for Nature

2023
पहाड़ और हिमाल प्रकृति

मृतप्राय नदी / लेखक: इमैन्यूएल थिओफ़िलस

© पहाड़ और हिमाल प्रकृति

पहला संस्करण: 2023

मुखपृष्ठ व अन्य आवरण चित्र: इमैन्यूएल थिओफ़िलस

सम्पादन: उमा भट्ट एवं शेखर पाठक

डिज़ाइन: आशुतोष उपाध्याय

प्रकाशक:
पहाड़
तल्ला डांडा, नैनीताल-263 001
फ़ोन: 94117 92292
ईमेल: pahar.org@gmail.com

हिमाल प्रकृति
मुनस्यारी (पिथौरागढ़)- 262 554
फ़ोन: 94111 94041
ईमेल: himal.prakriti@gmail.com

लेखकीय आभार

इस पुस्तिका को तैयार करने और लगातार प्रोत्साहन और सहयोग के लिए **मलिका विरदी, शेखर पाठक** और **उमा भट्ट** का; इसके बेहतरीन अनुवाद के लिए **रमेश पांडे 'रमदा'** और इसकी खूबसूरत प्रस्तुति के लिए **आशुतोष उपाध्याय** का आभार। इन सबकी कोशिश से यह पुस्तिका मैं आपके सामने ला सका हूं।

पहाड़ तथा **हिमाल प्रकृति** की ओर से

नदी एक समाज, संस्कृति और आर्थिकी है

यह पुस्तिका सिर्फ भावनाओं से भरी ही नहीं है बल्कि विज्ञान और तर्क का विवेकसम्मत समन्वय है। यह काली नदी (नेपाल में महाकाली और टनकपुर से आगे शारदा), उसकी सहायक धाराओं, उनके समग्र जलागम, समन्दर तक की उसकी यात्रा, उसमें रहने वाली तमाम समाज-संस्कृतियों तथा आर्थिकी की तमाम परतों को सामने रखती है। इससे आगे यह पुस्तिका विभिन्न सरकारी समितियों की बेमानियों, पर्यावरण प्रभाव आंकलन की गड़बड़ियों तथा अनेक तरह के झूठ को पहचान कर पेश करती है। वैसे भी हर नदी अनेक समाज-संस्कृतियों व आर्थिकी के आधारों से जुड़ी और मूलतः एक समग्र इकोतंत्र होती है। उसका यह रूप अपने स्रोत प्रदेश से पहले किसी संगम और फिर सागर तक होता है। नदियों की सन्ततियां पीढ़ियों से और सदियों से नदियों पर निर्भर हैं। नदी उनकी मां है और पिता भी।

कोई सहसा विश्वास करने को तैयार नहीं होगा कि एक चुनी हुई सरकार अपने देश के संसाधनों व उसके नागरिकों के साथ छल भी कर सकती है। यही नहीं, पुस्तिका बताती है कि यह परियोजना किस तरह से नदी, उसके किनारों या करीब के समाजों को शरणार्थी बना देगी और उस आत्मनिर्भरता से भी वंचित कर देगी, जो नदी के कारण इन समाजों में खेती, बागवानी, पशुपालन, कुटीर उद्योग, मछली आदि के मार्फत सदियों से बनी हुई है। साथ ही निजीकरण के षडयंत्र के अनेक आयामों पर यह नजर डालती है कि कैसे एक क्षेत्र को डुबाकर, एक आजाद नदी को बांधकर एक धड़कती प्रकृति-संस्कृति को नष्ट कर दिया जायेगा और नदी की धारा को बदलकर एक नया पारिस्थितिक खतरा पैदा किया जायेगा। एक ऐसा खतरा, जिसकी यह व्यवस्था, इसके कर्ताधर्ता और इसके तमाम वैज्ञानिक कल्पना तक नहीं कर सकते।

• • •

जब टिहरी बांध बनने लगा था तो दिवंगत स्वतंत्रता सेनानी और वकील वीरेन्द्र दत्त सकलानी ने 1978 में टिहरी बांध विरोधी संघर्ष समिति का गठन किया था। हिमालय और बांधों का गहन अध्ययन करने के बाद उन्होंने भारत के सर्वोच्च न्यायालय में एक विज्ञानसम्मत रिट दायर की और उन्हें एक बहुत बड़े नागरिक समूह, वैज्ञानिकों और कुछेक राजनेताओं का समर्थन प्राप्त हुआ। फिर टिहरी के डूबक्षेत्र के नागरिकों का सहयोग पाकर प्रत्यक्ष आन्दोलन आगे बढ़ा। सुन्दरलाल बहुगुणा तथा साथियों के आन्दोलन के साथ जुड़ने के बाद यह विकास की प्रचलित अवधारणा को चुनौती देने वाला आन्दोलन बनने लगा। तब जो नारा सर्वाधिक प्रख्यात हुआ था, वह था 'टिहरी बांध सम्पूर्ण विनाश का प्रतीक है'। 1980 के आसपास चण्डी प्रसाद भट्ट तथा साथियों ने भी विज्ञानसम्मत तरीके से विष्णुप्रयाग परियोजना को चुनौती दी और क्षेत्र के भू-पारिस्थितिक इतिहास को नए शोध के साथ तर्कपूर्ण तरीके से प्रस्तुत किया। कहा कि विष्णु गंगा, पुष्पावती और धौली के जलागम बहुत नाजुक हैं और 6 महीने पूरी तरह बर्फ से ढके रहते हैं। इन तर्को को माना गया और 1990 में निजीकरण का दौर शुरू होते ही जब विष्णु गंगा परियोजना निजी हाथों में आने वाली पहली परियोजना बनी तो भू-पारिस्थितिक तर्क नहीं माने गये। उक्त दोनों बातें पंचेश्वर बांध के लिये कही जा सकती है। कही जानी चाहिये। यहां संकट गई गुना ज्यादा बढ़ गया है। यह पुस्तिका भी यही कहती है।

• • •

इमैन्यूएल थियोफिलस जीवविज्ञानी और पर्यावरणविद होने के साथ पर्वतारोही, पथारोही और कयाक-नाविक भी हैं। वे काली नदी के जलागम में पिछले तीस साल से रह रहे हैं और इसके चप्पे चप्पे से परिचित हैं। वे अपनी खोजी नजर के साथ इसके गांव-गांव, संगम-संगम, बुग्याल-बुग्याल और दर्रे-दर्रे तक गये हैं। इसके कई शिखरों में उन्होंने पर्वतारोहण किया है और लगभग हर दर्रे को पार किया है तो इसकी नदियों के साथ-साथ चले हैं।

एक यात्रा उन्होंने 2015 में इस नदी की गोद में नाव चलाकर अपने पुत्र जन्सकार के साथ पूरी की। जौलजीबी से गंगा सागर तक की यह 2000 किमी. से लम्बी यात्रा थी। यह यात्रा काली/महाकाली या शारदा के बाद इसके कर्नाली

में और यहां से बनी घाघरा के गंगा में संगम और फिर कोसी के इसमें विलीन होने के बाद हुगली-गंगा सागर में समाप्त हुई। गंगा को समझने की यह एक अलग यात्रा थी। इसमें गंगा के तिब्बती तथा नेपाली जलागम से आने वाली नदियों से मुलाकात होती है। उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल के सैकड़ों गांवों और दर्जनों शहरों से होकर और ग्रामीणों और शहरियों से सम्वाद करते हुये यह यात्रा बंगाल की खाड़ी पहुंची थी। एक नदी की जिन्दगी को पढ़ने का इससे बेहतर तरीका और क्या हो सकता है!

• • •

जब मनुष्य को बचाया जाना असंभव होता जा रहा है तो नदी कब तक बची रहेगी? यह सवाल बहुतों के मनों में उठता है। कोई भी आम जन और प्रकृति का पक्षधर जनता के संसाधनों को लूटने के षडयंत्र को सिर्फ उजागर कर सकता है बाकी तो उस समाज के चेतनाशील मनुष्यों या उनके संगठनों को करना होगा। आम जन को इसमें समझदारी से सहयोग करना होगा। हालांकि इस देश और उत्तराखण्ड में अभी कोई संगठन इस लड़ाई को आगे ले जाने वाला नहीं नजर आ रहा है। पर जो कोई भी ऐसा करेंगे उनको यह पुस्तिका सोचने को विवश करेगी। नौजवान पीढ़ी के मन में कुछ न कुछ नया पक रहा होगा। यदि यह पुस्तिका आम नौजवानों के साथ काली घाटी और पास के समाजों को वास्तविकता का भान करा सकी तो यह मेहनत सार्थक समझी जायेगी।

शेखर पाठक

श्री रमेश पांडे 'रमदा' अर्थशास्त्र के प्राध्यापक रहे हैं और इस पुस्तिका के अनुवादक हैं। वह समाज के प्रति संवेदनशील और तार्किक नजरिया लिये हुये होते हैं। वह समाचार पत्रों में अपनी टिप्पणियों के लिये भी जाने जाते हैं। अब अवकाश प्राप्त कर रामनगर में रहते हैं। पहाड़ के लिये उन्होंने अनेक लेखों का अनुवाद किया है।

पूर्व कथन

नदी तट से लगी, नीचे मैदानों की ओर तकरीबन आधी दूरी पर, एक जगह है जहां संकरी गहरी घाटियां शिलाखंडों से भरे बाढ़ से बने विस्तृत मैदानों (सेरों) में खुलती हैं। यहाँ पहुँचने तक 10 हजार फीट से अधिक नीचे उतर आई नदी 33 से अधिक हिमनदों एवं अनगिनत हिम स्रोतों के पानी को समेटते हुए विशाल आकार ले लेती है। अगर मानसून के मौसम की किसी रात, मसलन अगस्त माह में, आप यहाँ हों तो प्रचंड स्वरूप ले चुकी नदी की दहाड़ के बावजूद धारा के भीतर लुढ़क रहे शिलाखंडों की आवाज सुन सकते हैं। चौमास के इन दिनों नदी के ऊपरी जलग्रहण-क्षेत्रों की घनघोर वर्षा चार मीटर तक पहुंच जाती है। यह हजार घन मीटर प्रति सेकंड की रफ़्तार से बहते, टनों गाद से भरे गहरे मटमैले पानी के भीतर नदी तल में पृथ्वी की सतह के पुनर्चक्रण की आवाज है। जिसके साथ नदी एक प्राचीन समुद्र-तल की आकाशमुखी चट्टानों को तोड़-फोड़, उलट-पुलट, घिस-पीसकर कंकड़, बजरी, जैसे रूप देती हुई अंततः टेल्कम पाउडर जितनी महीन मिट्टी में बदलकर दूसरे समुद्र-तल में पहुंचा देती है। शायद इसीलिए आदि-ऊर्जा, प्रलय और नवीकरण की प्रतीक देवी के नाम पर इस नदी को महाकाली कहा जाता है।

महाकाली के दाहिने तट पर, जहां छोटे से सोते से उपजी चरमा गाड़ का संगम है, द्वालीसेरा नाम का एक छोटा सा गाँव है। नदी पार नेपाल है। द्वालीसेरा के एक भूमिहीन गरीब परिवार में केशव राम का जन्म हुआ। नदी के सहारे जीवन-निर्वाह के गुर सीखता हुआ वह नदी किनारे ही बड़ा हुआ। मछलियों का निपुण शिकारी केशव राम तीव्र प्रवाह के बावजूद नदी में, पानी के चढ़ाव के बाद, उतार के साथ बनने वाले गहरे कुंडों में फंस गई बड़ी मछलियों को पकड़ने के लिए कूद जाने का साहस रखता था। ताक़तवर घुमावदार लहरों में ऊदबिलाव की तरह घुसकर वह जलमग्न शिलाखंडों के बीच बड़ी मछलियों की टोह लेता, टटोलता और उन्हें पकड़ने के लिए उनसे कुश्ती लड़ता सा प्रतीत होता था।

बारह साल पहले गर्मियों की शुरुआत में, तारों भरी लगभग अंधेरी सी एक रात को केशव संगम पर महासीर के लिए अपना मजबूत जाल बिछाने निकला। इन दिनों महासीर अंडे देने के लिए काली की अशांत-मटमैली मुख्य धारा से स्वच्छ धारा की ओर बजरी तल की तलाश में आती हैं। अपनी पसंदीदा जगह की तलाश में चरमा गाड़ में प्रवेश करती एक महाकाय महासीर एक चमकदार छोटी मछली पर झपटती है। यह केशव द्वारा लगाया गया तीन नोक वाला काँटा है जो महासीर के होंठ को चीरता हुआ उसे अपनी गिरफ्त में ले लेता है। आदमी और मछली के बीच एक ऐसे मारक संघर्ष की शुरूआत होती है जो आकाश में भोर की पहली किरण के फूटने पर ही ख़त्म होता है।

नहीं मालूम कि छिछले पानी में मछली को ले आने के बाद केशव ने क्या देखा! इतना मालूम है कि मछली को जमीन पर लाने की जद्दोजहद में उसने खुद से अब तक देखी गई सबसे बड़ी मछली की आँखों में झाँका और तभी जैसे उसे कुछ हो गया। वह दिलेर आदमी जैसे डर गया। एक ऐसा डर उसके भीतर पैठ गया जिससे वह फिर कभी बाहर नहीं निकल पाया। उल्टी छलांग लगा मछली उसने वापस नदी में छोड़ दी और घर लौट कर बिस्तर पकड़ लिया। उसके बेटे ने बताया कि उसने फिर कभी मछलियों का शिकार नहीं किया और तमाम झाड़-फूँक के बावजूद साल भर के भीतर गुजर गया।

केशव की मौत एक पहेली बन गई। उसके परिवार के मुताबिक उसकी मौत का, शिकार के साथ हुए संघर्ष से कोई ताल्लुक नहीं था क्योंकि उस जैसे ताकतवर आदमी के लिए ऐसी जद्दोजहद रोज की बात थी। फिर भी चंद महीनों में वह बिस्तर पर ही मर गया। छह साल पहले यह सब मुझे बताते हुए केशव के बेटे बाला ने ईश्वरीय विधान को इंगित करते हुए आकाश की ओर अंगुली उठा दी। यह कहानी बनावटी भले ही लगे पर है एकदम सच्ची। मैं इस कहानी को यहाँ इसलिए याद नहीं कर रहा हूँ कि यह हमारे जीवन में दैवी शक्तियों के प्रभाव की ओर संकेत करती है वरन मैं इसे आगे के एक ऐसे अन्य वृतांत के साथ रखना चाहता हूँ जो इसके एकदम विपरीत है। प्रगति और अग्रगति के लिए बनाए जाने वाले बांधों के उस वृतांत के साथ जिसमें उन्हें विकास और वैज्ञानिकता के छद्म में लपेटकर सच्चाई की तरह पेश किया जाता है।

द्वालीसेरा से नीचे की ओर, तकरीबन दो दिन के पैदल रास्ते पर पंचेश्वर नाम की जगह है। यहां महाकाली नदी पर संसार के सबसे बड़े बांध के निर्माण का शुरुआती काम चल रहा है। समूचा द्वालीसेरा, इसके सुनहरे रेतीले नदी-तट, नदी पार हजार साल पुराना गाँव, उकु और नदी किनारे के अन्य 134 गाँव, दसियों हजार घर, सुरम्य सीढ़ीदार खेत, प्राचीन देवालय, मीठे पानी के सोते, ग्राम्य-वन और तमाम वन्यता के साथ बांध के पीछे की ओर 80 किमी. तक फैला पूरा इलाक़ा जलप्रवाह में डूब जाएगा। यहाँ खड़े होकर दरअसल आप एक मृतप्राय नदी को देख रहे हैं। संरक्षण संबंधी विज्ञान में मृतप्राय उस प्रजाति को कहा जाता है जो उसके अपने पर्यावरण द्वारा निष्कासित कर दी गई हो और जिसके लिए विलुप्ति से बच सकने की कोई संभावनाएं शेष न रह गई हों। मृत्यु की ओर बढ़ती अपने वंश में अंतिम!

यह नदी भी अपनी पंक्ति में आखिरी है क्योंकि हिमालय की अन्य नदियां सघन रूप से बांधी जा चुकी हैं और पानी के अभाव में उनके बहाव की दिशा के नदी किनारे के रहवास अकल्पनीय पैमाने पर विलुप्त हो रहे हैं। यह लेख पंचेश्वर बांध परियोजना के प्रकट उद्देश्यों, छिपे इरादों और उस जटिल तथा गहरी राजनीति को बारीकी से देखने की कोशिश है जो इस ध्वंस को प्रेरित कर रही है।

मैं द्वालीसेरा से दूर, ऊपर की ओर, महाकाली की हिमनद-पोषित सहायक नदी गोरी के किनारे पिछले 30 सालों से रहता आया हूँ। इस दौरान मैंने उसकी बर्फीली सहायक नदियों से लेकर मेरे खून की तरह गरम सागर तक की यात्रा को निकट से देखा है। मैं उसके हिमनदीय ऊँचे इलाकों में पैदल चला हूँ और शेष को मैंने नावों के सहारे नापा है। उन लोगों से मिला हूँ, बातें की हैं जिनका भविष्य, मुझसे कहीं ज्यादा, इस नदी से जुड़ा है।

मैं निष्पक्ष रहने का दिखावा नहीं करूंगा।

* * *

पंचेश्वर बहुउद्देशीय बांध परियोजना

भारत और नेपाल, उनके बीच सीमा का निर्धारण करने वाली नदी, महाकाली पर एक विशालकाय बांध-समूह के निर्माण की योजना लंबे समय से बना रहे हैं। पंचेश्वर बांध, उसका 80 किमी. तक फैला हुआ जलाशय और भूमिगत बिजली-घर इसका हिस्सा हैं। बहाव की दिशा में 25 किमी. नीचे की ओर एक और 95 मीटर ऊंचे रूपालीगाड़ बांध का जलाशय और बिजलीघर बनेगा। यह विद्युत उत्पादन के दौरान पंचेश्वर बांध से निकलने वाले अनियमित जल प्रवाहों को नियंत्रित कर रूपालीगाड़ में भी बिजली बनाने एवं सिंचाई के लिए पानी को नहरों की ओर मोड़ने हेतु नियंत्रक का काम करेगा। पूरी तरह बन जाने पर 311 मीटर ऊंचा पंचेश्वर बांध, दुनिया का सर्वाधिक ऊंचा बांध होगा। ये दोनों बांध कुल 5,040 मेगावाट बिजली का उत्पादन करेंगे। यह उत्पादन क्षमता भारत के सबसे बड़े जल विद्युत बांध की क्षमता से दोगुनी और परमाणु बिजलीघर की उत्पादन क्षमता की ढाई गुनी होगी। 116 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैले पंचेश्वर बांध का जलाशय समूचे उपमहाद्वीप का, अब तक का, सबसे गहरा जल भण्डार होगा। 'आकस्मिक' बाढ़-नियंत्रण और दो देशों के सुदूर मैदानी इलाकों में सिंचाई की बढ़ती संभावनाएं इसके अतिरिक्त उद्देश्य हैं।

पंचेश्वर बांध-स्थल का निर्धारण, 60 से भी अधिक वर्ष पूर्व, 1956 में कर लिया गया था। यह वह समय था जब औद्योगीकरण की राह पर शुरूआती कदम रखने वाले रूस, चीन तथा भारत जैसे देश विद्युत-उत्पादन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण छलांग लगाना चाह रहे थे। किन्तु तब उनके पास न तो अधिक सुरक्षित और कम लागत वाले विकल्प थे और न ही यह जानकारी कि बड़ी जल-विद्युत परियोजनाएं कितनी जोखिम भरी तथा समाज व पर्यावरण के लिए विनाशकारी हो सकती हैं। तब से अब तक बहुत कुछ बदल गया है। भारत बिजली की खपत के व्यस्ततम समय पर भी प्रकटतः आत्मसंपन्न विद्युत-अतिरेक युक्त राष्ट्र है और निकट भविष्य में भी रहेगा। ग्रामीण भारत के हजारों गाँव अगर बिना बिजली के हैं तो इसका कारण उत्पादन की कमी नहीं वरन

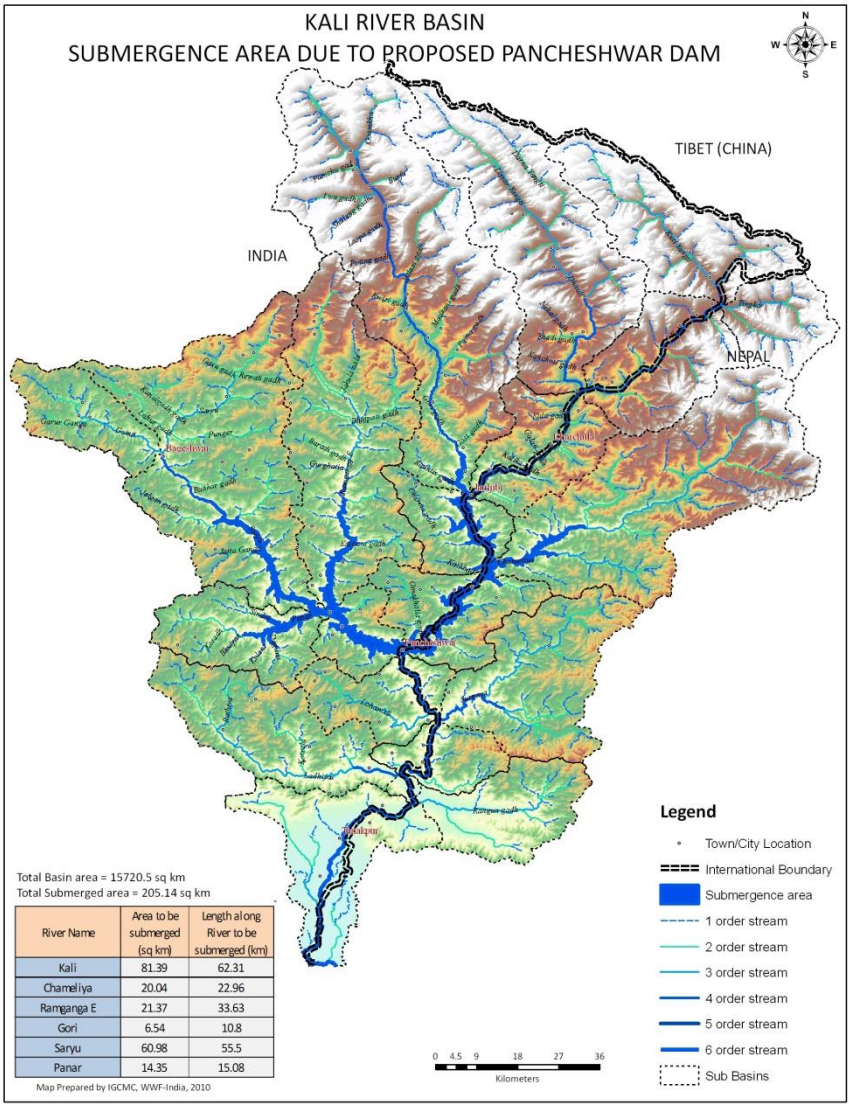

River Name	Area to be submerged (sq km)	Length along River to be submerged (km)
Kali	81.39	62.31
Chameliya	20.04	22.96
Ramganga E	21.37	33.63
Gori	6.54	10.8
Saryu	60.98	55.5
Panar	14.35	15.08

काली नदी बेसिन एवं प्रस्तावित पंचेश्वर बांध का डूब क्षेत्र

गांवों का बिजली की व्यवस्था से जुड़ा न होना है। बाजार-अंश के अपेक्षाकृत बड़े हिस्से की आपूर्ति करने वाली जल विद्युत् सौर एवं वायु ऊर्जा की तुलना में

फ़िलहाल दोगुनी महंगी तो है ही, इसके दोषों को भी विश्व स्तर पर रेखांकित किया गया है। जहां उत्तरी अमेरिका और यूरोप के औद्योगीकृत देश अपने बड़े बांधों को ढहा रहे हैं वहीं ब्राजील ने ऐमेज़न पर अतिरिक्त विशाल बांधों के निर्माण के विचार को खारिज कर दिया है। किन्तु भारत और नेपाल दोनों की राजनैतिक व्यवस्थाएं और अनुमोदन-समितियां इस विशाल बांध परियोजना को अतिरिक्त आग्रह और अधैर्य के साथ आगे बढ़ा रही हैं। निर्धारित प्रक्रिया का अनुपालन अब केवल एक स्वांग रह गया है।

भारत में बांध-निर्माण के लिए निर्धारित प्रक्रिया का विकास कई दशकों में तथा विस्तृत बांध निर्माण एवं तकनीकी कमियों संबंधी अनुभवों और अब तक महसूस किए गए सामाजिक व पर्यावरण संबंधी विनाशकारी प्रभावों के अतिरिक्त अंतरराष्ट्रीय वित्त की शर्तों के आधार पर हुआ है। आज विशाल संरचनात्मक परियोजनाओं के निर्माण से पहले स्वीकृतियों की एक श्रृंखला से गुज़ारना पड़ता है। पहले औचित्य संबंधी रपट, परियोजना स्थल- डिजाइन-तकनीक-आर्थिक एवं वित्तीय परिमापों से संबन्धित विस्तृत परियोजना रपट (Detailed Project Report- DPR), तदुपरांत संभावित प्रतिकूल प्रभावों और उनके निवारण की योजनाओं को अभिव्यक्ति देते पर्यावरणीय प्रभाव एवं सामाजिक प्रभाव-आकलन (Environmental Impact Assessment-EIA & Social Impact Assessment Report- SIA)। ये स्वीकृतियाँ, कम से कम सिद्धांततः, सार्वजनिक निरीक्षण का स्वरूप लेते हुए सुनिश्चित करती हैं कि परिणाम जनहित में ही होगा।

भारत में ये तमाम रपटें परियोजना-प्रस्तावकों के अपने परामर्शकों द्वारा बनाई जाती हैं और सरकार द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ-समितियां इनकी समीक्षा करती हैं। परियोजना-प्रस्तावक सरकार या कोई भी निजी कंपनी, जिसे बांध निर्माण संबंधी काम करने का अनुभव हो या न भी हो, हो सकती है। उदाहरण के लिए गोरी नदी पर प्रस्तावित परियोजनाओं के लिए बोली लगाने वालों में 'चंडीगढ़ डिस्टिलर्स एंड बौटलर्स' एवं 'कृष्णा निट वियर' शामिल थे। इसके बाद जन-सुनवाई के अंतर्गत गाँवों के डूबने, लोगों के विस्थापन, जीविका-समाप्ति संबंधी गणनाएँ, संकटों के न्यूनीकरण तथा उचित मुआवजा सम्बंधी योजनाएँ

लोगों के बीच सूचना, सहमति और स्वीकृति की प्रत्याशा में रखी जाती हैं। यदि वन-भूमि प्रभावित होती हो तो केंद्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्रालय से अनुमति लेनी होती है। प्रभावित क्षेत्र के किसी अभयारण्य या नेशनल पार्क की, 10 किमी. की, परिधि में होने की स्थिति में 'नेशनल बोर्ड फॉर वाइल्ड लाइफ' की पूर्वानुमति आवश्यक होती है। इस सब में केवल बांध के ढांचे और जलाशय से प्रत्यक्षतः प्रभावित इलाके को ही शामिल किया जाता है। नदी के प्रवाह-क्षेत्र से सागर तक फैले तमाम पर्यावासों पर पड़ने वाले प्रभाव को इसमें सम्मिलित नहीं किया जाता। वास्तव में अनेक बांधों का सम्मिलित प्रभाव एक बांध विशेष के अकेले प्रभाव से कहीं अधिक होता है। इस तर्क के आधार पर भारी जन-दबाव में, पाँच वर्ष पूर्व, उच्चतम न्यायालय ने गंगा की दो सहायक नदियों पर और अधिक बांधों के निर्माण की अनुमति देने से पूर्व संचयी प्रभाव आकलन (Cumulative Impact Assessment) किए जाने के आदेश दिये थे। यद्यपि ऐसे आकलन अन्य देशों में मानक-प्रक्रिया का हिस्सा हैं किन्तु भारत की अन्य नदियां तो एक तरफ गंगा की अन्य सहायक नदियों के मामलों में भी इसे अपनाया नहीं गया।

वर्तमान में पंचेश्वर बहुद्देशीय बांध परियोजना स्वीकृति सम्बन्धी प्रक्रिया के अंतिम चरण में है। पर्यावरण और सामाजिक प्रभाव रपटें नदी-घाटी परियोजनाओं की विशेषज्ञ सलाहकार समिति (Expert Advisory Committee) के विचारधीन हैं। इस समिति में संबन्धित मंत्रालयों के नौकरशाह और संबन्धित विषयों के नामांकित विशेषज्ञ होते हैं। विरले अपवादों से इतर ये तमाम समितियां सरकारों और निजी स्वार्थों के हित में सक्रिय, सरकार की बोली बोलने वाले, लोगों का जमावड़ा ही साबित हुई हैं। पंचेश्वर बांध-परियोजना संबंधी विधिक जन-सुनवाई तीन प्रभावित जिलों (पिथौरागढ़, चम्पावत तथा अल्मोड़ा) में हुई तो है किन्तु बड़ी तादाद में हथियारबंद पुलिसकर्मियों की मौजूदगी सभाकक्ष तक में रही। मुझे यह जानकारी वहाँ मौजूद पंचेश्वर गाँव के लक्ष्मण बिष्ट ने दी कि कई लोगों को सभाकक्ष में आने ही नहीं दिया गया और दृढ़ता से अपनी बात रख रहे प्रदर्शनकारियों को बलात बाहर कर दिया गया।

पंचेश्वर विकास प्राधिकरण (PDA) भारत तथा नेपाल दोनों के संयुक्त संचालन में है। यह पचेश्वर बांध परियोजना सम्बन्धी सभी मामलों का प्रबन्ध करती है। पर्यावरण तथा सामाजिक प्रभावों सम्बन्धी संवेदनशील रपटों से जुड़े मामले के निष्पादन का दायित्व भी इसी का है। फिर भी किसी वजह से, पी.डी.ए. को नजरअंदाज करते हुए, दोनों देश अपने-अपने संबन्धित अधिकरणों के सम्मुख अनुमोदन हेतु अलग-अलग प्रपत्र रखते हैं। दोनों देशों के बीच पानी के बँटवारे की व्यवस्था के लंबे और कटुतापूर्ण इतिहास के बावजूद दोनों सरकारें इस परियोजना की त्वरित स्वीकृति के प्रति आग्रही रही हैं। यहाँ तक कि संचयी प्रभाव-आकलन को, जिसे सर्वत्र मानक-प्रक्रिया माना जाता है, पूरी तरह दरकिनार कर दिया गया है। इस बड़ी बाँध परियोजना का प्रत्येक पहलू, तकनीकी-व्यवहार्यता, आपदा-संभावना, अर्थहीन-आर्थिकी, आधी-अधूरी कार्य-विधि और इस सब में औपनिवेशिक-राजनीति सभी के प्रति गंभीर शंकाएँ हैं। आइये, नजदीक से देखते हैं।

महाकाली के किनारे नेपाल का एक उपजाऊ सेरा (फोटो: शेपा)

* * *

समुचित सावधानी की कमी और विध्वंस की संभावना

हिमालय सबसे अधिक गतिशील भूदृश्यों में से एक है। भूगर्भीय नजरिये से युवा कही जाने वाली यह पर्वत श्रृंखला कहीं की भी तुलना में अधिक बारिश का अनुभव करती है और ग्लेशियर सम्बन्धी विस्थापनों के कारण निरंतर स्वरूप बदलती रहती है। भूकंप और भारी ध्वंसावशेष-प्रवाह समूचे परिदृश्य को लगातार बनाते बिगाड़ते रहते हैं। किन्तु हिमालय अपने अस्तित्व के लिए मुख्यतः भारत और एशिया के महाद्वीपीय धरातलों (इंडियन एंड एशियन प्लेट्स) के ढांचों की, तकरीबन साढ़े पाँच करोड़ साल पहले शुरू हुई, टकराहट पर निर्भर रहा है।

भारतीय प्रायद्वीप के धरातल का 20 से 50 मिलीमीटर प्रतिवर्ष की गति से, एशियन प्लेट की ओर खिसकना निरंतर जारी है। परिणामतः कुछ ही लाख सालों में हिमालय के कई हिस्से दो हजार मीटर तक ऊपर उठे हैं। ऐसा धीरे-धीरे और समान गति से नहीं वरन असामयिक झटकों की तरह भूकंपों की निरंतर जारी श्रृंखला द्वारा हुआ है। प्रबल आघातों द्वारा सृजित तनावों व दबावों ने धरातलीय परत को ध्वस्त कर यहाँ अनेक दरारों तथा भ्रंशों (Faults) को आधार दिया है, जिनके बीच हिमालय के अलग-अलग हिस्से अलग-अलग गतियों से ऊपर की ओर धकेले जा रहे हैं। ये प्रमुख भ्रंश हिमालय के आरपार फैले हैं। इन भ्रंशों के बीच विविध कोणों पर, दबाव और रपटनों के अलग-अलग स्तरों पर, अनेक छोटी दरारें हैं। ये दरारें समय-समय पर इन भ्रंशों के साथ-साथ, इन्हीं की प्रकृति के अनुरूप ऊर्ध्व (compressional thrust fault) व क्षैतिज (strike slip fault) चलनों को आधार देती हैं।

इस जानकारी के बाद भी दो-दो बांधों, जलाशयों और विशाल टर्बाइनों के लिए बनाई जाने वाली विस्तृत भूमिगत सुरंगों से युक्त पंचेश्वर बहुद्देशीय बांध परियोजना हिमालय के भीतरी इलाके में ऐसी जगह पर प्रस्तावित है जो टूटे-फूटे भूगर्भीय भ्रंशों से भरी है। इस क्षेत्र को भूकंपीय खतरों की संभावनाओं के नजरिये से सर्वाधिक खतरनाक माने जाने वाले सिस्मिक ज़ोन-5 में रखा जाता

है। क्षेत्र का भूकम्पीय-मानचित्र (seismic map) काँच की किसी छिन्न-भिन्न सतह जैसा लगता है। पंचेश्वर बांध से 80 किमी. उत्तर में, जहां जलाशय सबसे ज्यादा फैलाव में होगा, मुख्य मध्य भ्रंश (Main Central Thrust- MCT) पड़ता है। ऊर्ध्व दबाव पैदा करने वाला यह भ्रंश लघु हिमालय को उच्च हिमालय से अलग करता है और अनेक बड़े भूकंपों का क्षेत्र रहा है। पंचेश्वर बांध का प्रस्तावित 80 किमी. लंबा जलाशय तीन अन्य भ्रंशों- अनरखोली, पचकोरा तथा, बांध स्थल से मात्र तीन किमी. दूर, उत्तरी अल्मोड़ा भ्रंश- के ठीक ऊपर होगा। बांध की धुरी (axis) उत्तरी अल्मोड़ा भ्रंश की 'हैंगिंग वॉल' के ऊपर स्थित है।

अब बांध के आस-पास के प्रमुख भ्रंशों की बनावट पर एक नजर डालते हैं। सरयू, महाकाली की सबसे बड़ी सहायक नदी, जिसका संगम प्रस्तावित बांध स्थल से केवल 3 किमी. दूर है, उत्तरी अल्मोड़ा भ्रंश से उत्पन्न दरार में ही बहती है। सरयू की सहायक रामगंगा, जिसका संगम पंचेश्वर से 15 किमी. ऊपर की ओर है, एक अन्य भ्रंश, रामगंगा भ्रंश, के साथ बहती है। रूपालीगाड़ बांध के 05 किमी. दक्षिण में दक्षिणी अल्मोड़ा भ्रंश और केवल 17 किमी. दक्षिण में अत्यधिक सक्रिय मुख्य सीमांत भ्रंश (Main Boundary Thrust- MBT) है। मुख्य सीमांत भ्रंश के 20 किमी. दक्षिण में, वर्तमान में सर्वाधिक सक्रिय, हिमालयी अग्र भ्रंश (Himalayan Frontal Thrust- HFT) की मौजूदगी है। अनेकानेक अध्ययनों ने संकेत किया है कि प्लेट बाउंड्री, जहां भारतीय प्लेट एशियाई प्लेट पर आघात करती है, पर भारी दबाव संचित हो रहा है। जिसका अभिप्राय है कि मुख्य हिमालयी भ्रंश के फैलाव के भीतर एक अन्तर्ध्वंस अवश्यसंभावी है। समग्रतः बांध नरम शैल-समूहों से निर्मित छिछली, निर्बल भूगर्भीय परत पर बनेगा और बांध की नींव चट्टानों की ऐसी परत पर होगी जिसकी कठोरता में एकरूपता नहीं है और यह उसे शक्तिहीन ही रखेगा।

पंचेश्वर बांध परियोजना एवं जलाशय-स्थल की अतिवादी भूकंपीय संभाव्यता सर्वविदित है। भारत के विश्वविद्यालयों के स्वतंत्र अध्ययनों के अतिरिक्त भारतीय भूगर्भीय सर्वेक्षण, अंतरराष्ट्रीय विशेषज्ञों के एक समूह और नेपाल के खनन एवं भूगर्भ विभाग ने इस संदर्भ में अनेक अध्ययन किए हैं। किन्तु भारत की विस्तृत परियोजना रपट (DPR) तथा पर्यावरण प्रभाव रपटों

(Environmental Impact Assessment Reports) में इन शोध-निष्कर्षों को या तो कमतर दिखाया गया है या नकार दिया गया है। नेपाल द्वारा प्रस्तुत पर्यावरणीय-प्रभाव विश्लेषण की भारतीय विश्लेषण से तुलना करने पर साफ दिखाई देता है कि भारतीय रपटों में तथ्य छिपाए गए हैं।

उदाहरण के लिए, भूकंपीयता एवं बांध की व्यवहार्यता पर नेपाल का पर्यावरणीय प्रभाव आकलन कहता है- "प्रस्तावित बांध-स्थल और जलाशयों के आस-पास भू तथा शिला-स्खलनों की स्थितियों की मौजूदगी के अलावा जलाशय-क्षेत्र में ढलानों की अस्थिरता के कारण भूगर्भीय संकटों की संभावनाएं हैं। कमजोर भूगर्भीय संरचनाओं के कारण रूपल क्षेत्र में भेद्यता (permeability) के उच्चतर होने की संभावनाएं हैं। जलस्तर के उतार-चढ़ाव और जलाशय की तरंगें जलाशय के किनारों पर भूस्खलन तथा क्षरण का कारण बन सकती हैं जिससे अवसादन त्वरित होगा। भूकम्पों से जलाशय के ढलानों के खिसकने, तले के धसने तथा फैलने की संभावना को बढ़ा सकता है। जलाशयों की परिधि पर अस्थिरता एवं जलाशय-जनित भूकंपीयता एक विचारणीय विषय हो सकता है।"

इस स्थल के लिए अधिकतम संभव-भूकंप (Maximum Credible Earthquake/ MCE) के बारे में नेपाल का आकलन, "भारतीय प्लेट के समग्र अंश में अन्तर्ध्वंस को आधार देने वाले, हिमालय के किन्हीं भी अन्य महा भूकंपों की तरह के 8.3 से 8.6 के पैमाने के एक बड़े भूकंप" का संकेत करता है।

एक अमूर्त संख्या 8.6 के पैमाने के भूकंप का, आघात के संदर्भ में, क्या अर्थ होता है? अत्यंत कम जनसंख्या वाले इलाकों पर आघात का संदर्भ लेते हुए केवल हिमालयी भूकंपों की ही चर्चा यदि की जाए तो 1905 का ऐतिहासिक कांगड़ा-भूकंप 6.8 पैमाने का था और 2000 से अधिक लोगों की मौत का कारण बना। अधिकांश की याद में मौजूद 7.8 पैमाने के 2015 के नेपाल-भूकंप में तकरीबन 9,000 लोग मारे गये थे। यहाँ से पश्चिम की ओर कुछ ही घाटियों दूर स्थित उत्तरकाशी में 1991 का भूकंप 6.8 पैमाने का था जिसमें 800 से अधिक लोग मारे गए थे, घायलों की विशाल संख्या और बड़े पैमाने की आर्थिक क्षति की बात ही अलग है।

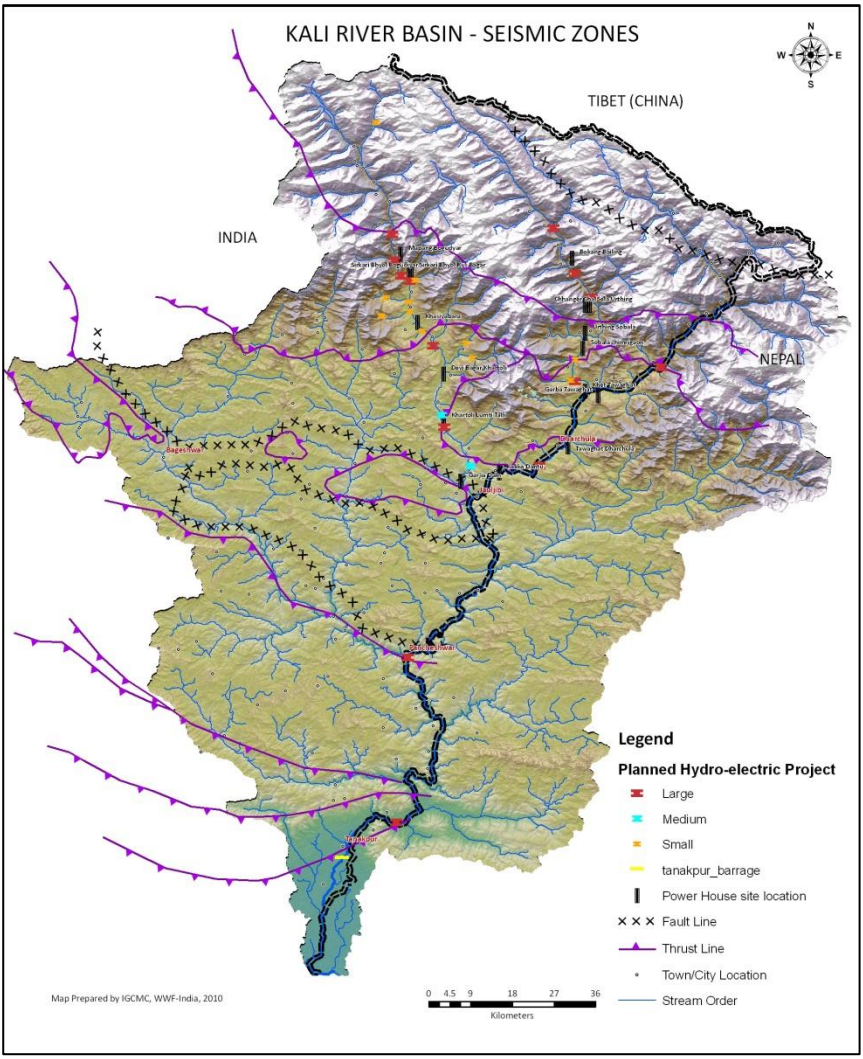

काली नदी बेसिन की भूकंपीय संवेदनशीलता

लघुगुणकीय पैमाने पर 7.8 परिमाण का भूकंप 6.8 के भूकंप की तुलना में 32 गुना और 5.8 की तुलना में 1,000 गुना ऊर्जा पैदा करता है। हिमालय में अब तक रिकॉर्ड किए गए सबसे बड़े भूकंपों में से एक 1934 का नेपाल-बिहार

भूकंप था। 8.0 पैमाने के इस भूकंप के बारे में प्रामाणिक रिकॉर्ड उपलब्ध हैं कि ल्हासा से मुंबई और असम से पंजाब तक इसके झटके महसूस किए गए। 300 किमी. की लंबाई में जमीन धँसी और तरल हुई, सतह के भीतर से झटके के साथ बाहर आए पानी और रेत ने भूदृश्य को बदल कर रख दिया, शहर के शहर मटियामेट हो गये। मृतकों की संख्या तो स्तब्ध कर देने वाली थी। पंचेश्वर बांध परियोजना की डी.पी.आर. में ही संकेत है कि बांध-स्थल के निकटवर्ती क्षेत्र में संभावित भूकंप का पैमाना 8.6 के स्तर का होगा।

प्रख्यात भू-वैज्ञानिक सुव्रत खेर ने संकेत किया है कि यह बांध-स्थल एक ऐसी भूकंपीय दरार (seismic gap) के बीच पड़ता है, जो हिमालय के उस हिस्से में है जो 1905 और 1934 के भूकंप-क्षेत्रों के बीच में पड़ता है और जिसने 200 से 500 सालों की अवधि में किसी बड़े भूकंप का सामना नहीं किया है। आशय है की उत्तराखंड और नेपाल के इस इलाके की सतह के नीचे के विशाल भ्रंश पर बड़ा दबाव सृजित हो रहा है। उनका कहना है की यह स्पष्टतः चिंता का विषय है। हिमालयी-भूवैज्ञानिकों के बीच लब्ध-प्रतिष्ठित खड्ग सिंह वल्दिया भी इसी एक मुख्य कारण से हिमालय के इस हिस्से में बड़े बांधों के निर्माण की धृष्टता के विरुद्ध, लंबे समय से, चेतावनी देते रहे हैं।

एक परामर्शदात्री कंपनी वैप्कॉस (WAPCOS Limited-Water and Power Consultancy Services Limited), जो 'जल-संसाधन, नदी-विकास एवं गंगा पुनर्जीवन-मंत्रालय' का हिस्सा है, ने न केवल भारत के लिए अंतिम विस्तृत परियोजना रपट तैयार की है वरन अपने ही प्रस्ताव के पर्यावरणीय-प्रभाव आकलन का नाटक भी किया है। अपनी डी.पी.आर. के विस्तृत विवरणों के विपरीत वैप्कॉस का निष्कर्ष है "पंचेश्वर-बांध जलाशय ठोस चट्टानों वाले पहाड़ों से घिरा होगा और जलाशय से जलरिसाव की कोई संभावना ही नहीं होगी। रिक्टर स्केल पर 8.5 के रैक्टर के गंभीरतम संभव भूकंप का भी यह बांध सामना कर सकेगा।" जबकि अपने डी.पी.आर. और पर्यावरणीय प्रभाव आकलन को बनाने के दौरान नेपाल द्वारा किए गए विस्तृत अध्ययनों से नितांत भिन्न तस्वीर उभरती है। ढलानों की स्थिरता को लेकर, महाकाली की निकटवर्ती 36 एवं सहायक नदी चमलिया से जुड़ी 16, कुल 52, जगहों पर नेपाल द्वारा

किए गए सर्वेक्षणों का निष्कर्ष रहा है कि इनमें से 27 (52%) स्थलों के जोड़ों पर विविध अस्थिरताओं के स्पष्ट संकेत हैं और बांध तथा पावर हाउस के आस-पास की जगहें अत्यन्त अस्थिर हैं।

नदी घाटी परियोजनाओं से संबन्धित विशेषज्ञ समीक्षा समिति को भेजे गए एक पत्र में जब नदी के निकटवर्ती क्षेत्रों एवं अन्यत्र के चिंतित नागरिकों ने, अन्य समस्याओं के अलावा, भूकंप की आशंकाओं जताई तो समिति की प्रतिक्रिया थी कि यह 'आतंक से भयभीत' कराने जैसा है और 'कोई भी परियोजना शत प्रतिशत निरापद नहीं होती।' नागरिकों की आशंकाओं के जबाब में यहाँ तक कहा गया कि '..... यह नया नहीं है। यह सब कुछ पहले कोयना, भाखड़ा और हाल में टिहरी बांध को लेकर भी कहा गया है किन्तु भारतीय इंजीनियरों ने भारत में कहीं भी, बड़े बांधों के निर्माण-कौशल का प्रदर्शन किया है।' यह तथ्य समिति की 05 दिसंबर 2017 की बैठक के आधिकारिक विवरण में मौजूद है।

कोयना बांध, जिसकी ओर शेखी बघारते हुए उन्होंने संकेत किया है, को अक्सर जलाशय-जनित भूकंपीयता (Reservoir Induced Seismicity- RIS) से बुरी तरह क्षतिग्रस्त बांध के उदाहरण के रूप में उद्धृत किया जाता है। अपने बांध इंजीनियरों के प्रति सम्मान बनाये रखते हुए बताना है कि जून 2013 की बाढ़ के दौरान प्रस्तावित पंचेश्वर बांध से ऊपर की ओर, ठीक महाकाली बेसिन में, कोई भी ऐसी एक जलविद्युत-बांध परियोजना नहीं थी जो पूरी तरह बह न गई हो या बुरी तरह क्षतिग्रस्त न हुई हो। 2013 की बाढ़ में बह गए, सहायक नदी पैना पर बने, बांध का बाद में पुनर्निर्माण तो किया गया किन्तु वह अपने बिजलीघर के साथ 2018 के मानसून में पुनः बह गया।

बड़े बांधों पर गठित अंतरराष्ट्रीय आयोग (ICOLD), जो स्वयं बांधों का पक्षधर संगठन है और जिसकी इंजीनियरिंग सम्बन्धी दिशा निर्देश (गाइडलाइंस) को विश्व स्तर पर मानक का दर्जा दिया जाता है, सचेत करता है कि बड़ी संरचनाओं के डिजाइनों की अत्यधिक भार उठा सकने सम्बन्धी क्षमता का अभी तक परीक्षण नहीं किया जा सका है। पंचेश्वर बांध, जिसके सामने भारत के सबसे बड़े बांध, भाखड़ा और टिहरी, बौने लगेंगे, का आकार तो अपरीक्षित है ही। हमें जापान के तोहोकू भूकंप (2001) का स्मरण करना चाहिए। फुकुशिमा

में दो-दो परमाणु बिजलीघरों के ध्वंस तथा हजारों किमी दूर भारत तक आघात करने वाली सुनामी के लिए कुख्यात यह भूकंप 9.0 पैमाने का था। कम लोग जानते हैं कि इस भूकंप ने न केवल एक समूचे द्वीप को कई मीटर खिसका दिया था वरन पृथ्वी की अक्ष के झुकाव के साथ-साथ परिभ्रमण-गति तक को बदल दिया था।

वैप्कॉस की परियोजना रपट (डी.पी.आर.) पंचेश्वर बांध से संभावित जलाशय-जनित एवं उत्प्रेरित भूकंपीय हलचलों की आशंकाओं को बड़े आराम से खारिज कर देती है। जलाशय के वजन से पृथ्वी की बाहरी परत पर पड़ने वाले भार तथा दरारों की राह से घुस आए पानी के कारण भ्रंशों पर बढ़ती फिसलन, दोनों की भूमिका होती है। यह ऐसे भूकम्पों को उत्प्रेरित करते हैं जो इन परिस्थितियों की गैरमौजूदगी में कभी भविष्य में स्वरूप लेते। इनके संदिग्ध बयानों के उदाहरणों में से एक निम्नवत हैः

"जलाशय उत्प्रेरित भूकंपों के वैश्विक आंकड़े बताते हैं कि यह आम तौर पर उन बांधों में स्वरूप लेते हैं जिनकी जलाशय क्षमता 01 अरब टन या अधिक और गहराई 100 मीटर या अधिक होती है।" प्रसंगवश पंचेश्वर बांध 11.35 अरब टन जल का वहन करेगा और 300 मीटर से अधिक ऊंचा होगा। इसके बावजूद वे कहते हैं कि, "जलाशय-क्षमता व जल की गहराई तथा जलाशय उत्प्रेरित भूकंपों के बीच कोई स्पष्ट सम्बंध स्थापित नहीं किया जा सकता। अतः यदि विश्व-स्तरीय आंकड़ों के प्रकाश में प्रस्तावित पंचेश्वर बांध-जलाशय को देखा जाए तो जलाशय उत्प्रेरित भूकंप संभावना मानी जा सकती हैं। दूसरी ओर अमूमन माना जाता है कि ऐसे भूकंपों ने सामान्य भ्रंशों के सहारे स्वरूप लिया है और चूंकि पंचेश्वर बांध को ऐसे विवर्तनिक-क्षेत्र के भू-धरातल (tectonic setup) में अवस्थित होना है जहाँ प्रक्षेप-भ्रंशों की अधिकता है, जलाशय-उत्प्रेरित भूकंपीयता (RIS) स्थल पर समस्या नहीं बनेगी (thrusts/reverse faults)।" अनाड़ीपन से भरी थोड़ी चर्चा के बाद वह आशंका को इस तर्क के साथ खारिज करते हैं कि "जलाशय उत्प्रेरित भूकंपीय हलचलों को प्रक्षेप-भ्रंश युक्त अवसादित विवर्तनिक विन्यास (compressional tectonic regime with thrust faults) को दृष्टि में रख कर नकार दिया जाता है।"

आशंका का यह मनभावन नकार दो आधारों पर गलत है। एक तो, समूचा भू-धरातलीय विन्यास (tectonic regime) अवसादित (compressional) नहीं है। दरअसल उत्तरी अल्मोड़ा भ्रंश (North Almora Thrust), जो बांध स्थल से महज तीन किमी. उत्तर में नदी के आर-पार एवं प्रस्तावित जलाशय के ठीक नीचे है, एक 'स्ट्राइक स्लिप भ्रंश' (strike & slip fault) है। यह ठीक उसी प्रकार का भ्रंश है जिस पर कोयना बांध-जलाशय के भार की वजह से एक बड़े धँसाव (lateral slip) ने स्वरूप लिया था। दूसरे, दो भूगर्भ-शास्त्रियों ने दबाव-युक्त (compressional) या प्रक्षेप-भ्रंशों को RIS से जोड़ा है। एक ताजा-तरीन और सुलिखित उदाहरण चीन के ज़िपिंगपू-बांध का है जिसने 2008 में 7.9 पैमाने के वेंचुआन-भूकंप को उत्प्रेरित किया था।

कोयना जलाशय उत्प्रेरित शक्तिशाली भूकंप सम्बन्धी भारत के अनुभव, जिसने कोयना की बसासत को मटियामेट कर दिया था और बांध को गंभीर क्षति पहुंचाई थी, के अतिरिक्त हमारे सामने विश्व के विकराल बांध विध्वंसों में से एक 1963 के इटली के वाजॉट बांध के उत्प्रवाह (overtopping) का उदाहरण है, जिसके पीछे जलाशय-उत्प्रेरित भूकंपनीयता थी। यह जलाशय, प्रस्तावित पंचेश्वर-जलाशय की तरह अधिकांशतः चूना पत्थर (लाइमस्टोन) की चट्टानों से बनी एक संकरी घाटी में स्थित था। निर्माण कार्य पूरा होने के तत्काल बाद, जैसे ही जलाशय भरना प्रारम्भ हुआ भूकम्पीय हलचलें रिकॉर्ड की गईं और भूस्खलनों की शुरुआत हुई। सावधानी के तौर पर जलाशय को अंशतः खाली किये जाने के साथ भूकंपीय गतिविधियां रुक गईं। जलभराव शुरू किए जाने के साथ हलचलें भी शुरू हो गईं और 09 अक्तूबर 1963 की रात सामने की ढलान का एक बड़ा हिस्सा सरकता हुआ जलाशय में समा गया और प्रतिफलित सुनामी बांध के 110 मीटर ऊपर से होकर, मिनटों में, तमाम वाशिंदों के साथ एक समूचे शहर और अनेक गाँवों को निगल गई। उधर, जैसा कि आज भारत में भी अमूमन होता है, बांध के भूकंपीय-जोखिमों की चेतावनी देने वाले संवाददाताओं पर इटली की सरकार ने, 'सामाजिक व्यवस्था को क्षति' पहुँचाने का आरोप लगाते हुए, मुकदमे दर्ज कर दिए।

जहां तक जलाशय के किनारों के स्थायित्व का सवाल है जलाशय-क्षेत्र अस्थिर मिट्टी की चट्टानों और पत्थर की भंगुर पट्टियों (स्लेट) के पैबंदों के साथ लाईमस्टोन तथा डोलोमाइट से मिलकर बना है। भारत तथा नेपाल दोनों ने अपनी विस्तृत रपटों में इसकी गंभीरता को स्वीकारा भी है। जलाशय के कगारों का अध्ययन, नदी के विस्तार के नक्शे तथा अन्य विवरण साबित करते हैं कि 52 सर्वेक्षित स्थलों में से 27 अत्यधिक अस्थिर हैं। अब चूंकि निष्कर्ष पक्ष में नहीं हैं, वाप्कोस समस्या से यह कहते हुए किनारा करता है कि चट्टानों की विशिष्टताओं संबंधी अतिरिक्त अध्ययनों एवं बाँध के 'प्रकल्पकार (designer) द्वारा विशेष उपचार विकसित किए जाने की आवश्यकता होगी'। ये अतिरिक्त अनुसंधान तभी उपयोगी और फलदायक साबित होंगे यदि वास्तव में नई जानकारियाँ जुटाने की कोशिश हो तथा निर्माण सम्बन्धी अनुमोदन से पूर्व इन अध्ययनों के नतीजों का इंतजार किया जाता। नदी घाटी परियोजनाओं सम्बन्धी विशेषज्ञ-समिति इंतजार करने वाली नहीं लगती और अंतिम अनुमोदन हेतु प्रभाव-आकलन रपट पर विचार कर रही है।

जहां तक जलाशय की सामर्थ्य या पानी को प्रभावी ढंग से संग्रहित रखने की दृष्टि से जलाशय कगारों की भूगर्भीय सुदृढ़ता का प्रश्न है, महाकाली की मुख्य धारा एवं, ऊपर की ओर, सहायक नदियों सरयू, रामगंगा तथा चमलिया के आस-पास का ज्यादातर जलाशय-क्षेत्र अधिकांशतः लाइमस्टोन और इसके एक अन्य प्रकार, डोलोमाइट से बना है। इनसे बनी चट्टानें पानी के अधिक संपर्क में आने पर क्षीण होकर, उडियारीकरण (कार्स्टिफिकेशन) की प्रक्रिया में घुलने लगती है और मोरियों एवं कन्दराओं द्वारा भूमिगत जल-प्रवाह का कारण बनती हैं। वैप्कॉस की रपट बलपूर्वक इस इलाके में इस प्रक्रिया की अनुपस्थिति का दावा करते हुए कहती है की जल-रिसाव या जलाशय-सामर्थ्य को लेकर खतरे की संभावनाएं हैं ही नहीं। पंचेश्वर से थोड़ा ही ऊपर पाताल-भुवनेश्वर, कोटेश्वर और गोरी बेसिन में जलाशय के ऊपरी हिस्से में मौजूद रौंतिसगाड़ की कार्ट्स कन्दराओं की या तो उन्हें जानकारी ही नहीं है या उन्होंने इसकी घोर उपेक्षा की है।

जलवायु-परिवर्तन प्रभावों से जुड़ी दो अन्य गंभीर चिंताओं की ओर भी बांध-प्रस्तावकों ने ध्यान नहीं दिया है। एक का सम्बन्ध हिमनदीय-जलाशयों, विशेषतः उन हिमालयी नदियों से जिनके उद्गम पर अनेक विशाल हिमनद हैं, से उच्चतः संभव विस्फोटक सैलाबों (Glacial Lake Outburst Floods-GLOFs) से है। महाकाली और उसकी सहायक नदियों के उदगम पर भारत और नेपाल के 40 चिन्हित हिमनद हैं जिनमें से 33 केवल गोरी घाटी में हैं। यह भी जानकारी में है कि हिमनदों के पिघलने के दौरान हिमनदीय-झीलों की संख्या और विस्तार में कुछ ही दशकों में वृद्धि हो जाती है। भूटान के पोछू बेसिन में एक हिमनद-झील का विस्तार 40 वर्षों में 800 प्रतिशत बढ़ गया था।

समय-समय पर इन झीलों ने भयावह बाढ़ों को जन्म दिया है। भूकंप, हिमनदीय-हलचल और अतिवृष्टि के कारण होने वाले उत्प्रवाह इन ध्वंशों के पीछे हैं, जैसा कि 2013 की बाढ़ के दौरान केदारनाथ और उसके निचले इलाकों में हुआ था। ये घटनायें अनौखी नहीं हैं। जीवन, संपत्ति तथा संरचनाओं को गंभीर क्षति पहुँचाने वाली ऐसी कम से कम 32 घटनाएँ हिमालय में रिकॉर्ड की गई हैं। तेजी से गरम होती जलवायु के साथ इनके बढ़ने की भविष्यवाणियाँ हैं। महाकाली जलग्रहण-क्षेत्र के मौसम विज्ञान सम्बन्धी आंकड़े दिखाते हैं कि घनघोर अतिवृष्टि की घटनाएँ सितंबर में होती हैं जब जलाशय लबालब भरे होते हैं और आकस्मिक विशाल जल प्रवाहों के लिए अतिरिक्त क्षमता का अभाव होता है। 2018 की केरल की प्रलयंकारी बाढ़ ऐसे ही जल प्रवाहों का ताजा उदाहरण है।

जलवायु परिवर्तन और एक विशाल जलाशय को कैद कर लेने से ही संबन्धित एक और विषय इस भूकंप संवेदी इलाके में भूमि की ऊपरी सतह पर भार (crustal load) के बदलाव या विवर्तन का है। सभी भू-धरातलीय प्लेटों (tectonic plates) के साथ आंतरिक दबाव-क्षेत्रों की संलग्नता होती है। निकटवर्ती plates के साथ अन्तर-क्रियाएँ, अवसादन (sedimentation) या हिमनदों के पिघलने से भार का घटना-बढ़ना उत्तरदायी कारण हैं। दबावों के यह बदलाव मौजूदा भ्रंशों और दरारों के ध्वंस और फिसलाव (slippage) के कारण भूकंप का सूत्रपात करते हैं। यह अध्ययन भली भांति किया जा चुका है

कि जलवायु-ताप में वृद्धि की वजह से हिमनदों का पीछे की ओर खिसकना पृथ्वी की सतह पर भार संबंधी उतार-चढ़ाव पैदा करता है। जो सतह पहले हिमनद के भार से दबी थी, ऊपर उठती है। जहां पंचेश्वर के उत्तर की ओर, मुख्य केंद्रीय भ्रंश (Main Central Thrust) के ऊपर का इलाका हिमनदीय-भार में कमी के कारण एक ऊर्ध्व चलन का अनुभव करेगा, वहीं पंचेश्वर बांध-परियोजना अपने ठीक दक्षिण की ओर के क्षेप तल (thrust plane) को नीचे की ओर दबायेगी।

तकरीबन 11.35 अरब टन वजनी, अकेला पंचेश्वर-जलाशय पृथ्वी पर, ध्रुवों से इतर, किसी भी विशालतम हिमनद के जलभण्डार से बड़ा होगा। चट्टानों से बने 630 लाख घन मीटर के इस बांध का वजन 880 लाख टन होगा। इसमें हर साल जमा होने वाली 420 लाख घन मीटर गाद, जिसका 20% अधिकतर शिलाखंड तथा कंकड़-पत्थर होंगे, का 588 लाख टन भार और जोड़ लीजिये। इस सब का 96% बांध के पीछे की ओर होगा क्योंकि बांध के प्रस्तावकों का दावा है कि उनकी टरबाइनों में प्रवाहित होने वाला पानी पेयजल जितना साफ होगा। इसमें बांध के 100 साल के सम्भावित जीवन-काल के अनुरूप 5.6 अरब टन का अतिरिक्त भार जोड़े जाने के लिए उपलब्ध होगा। यह एक संवेदनशील इलाके में, जलाशय उत्प्रेरित भूकंपीयता के लिए उपयुक्त, धरातलीय भार में बहुत बड़े बदलाव की स्थिति है। ऐसे प्रत्याशित प्रभावों की कोई चर्चा भारत तथा नेपाल के प्रकल्प (design) और जोखिम सम्बन्धी आकलनों में नहीं मिलती।

अनेक अन्य संकट हैं जिनकी ओर देखा तक नहीं गया है। जैसे, झीलों और जलाशयों के दोलक-चलन (oscillations) या भूकंप की स्थिति में विशाल जल-राशियों का दोलनयुक्त विचलन। विशाल जल-भंडार के ये विचलन यदि बांध की क्षति या ध्वंस का कारण न भी बनें तो भी विशाल जलराशि का छलकाव सैलाबों की वजह बनता ही है। 1959 में मोन्टाना की हेब्गन झील ने यही दिखाया था। 2015 में नेपाल के भूकंप की यू-ट्यूब पर तलाश आपको एक ऐसे वीडियो तक ले जाएगी जो दिखाता है कि भूकंप के दौरान काठमाण्डू के एक होटल के स्विमिंग-पूल का पानी कितनी भयावहता के साथ तरंगित हुआ था।

अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के अंतर्गत बांधों को 'विनाशकारी शक्तियों के संवाहक' के तौर पर अकारण ही नहीं देखा जाता। युद्ध की परिस्थिति में सामरिक-लक्ष्य के तौर पर इनकी नाजुक स्थिति पर विचार कीजिये। यह बांध ठीक एक अंतरराष्ट्रीय सीमा पर है, और उत्तर की ओर एक दूसरी सीमा से मुश्किल से 150 किमी. दूर। आधारक संरचना को अपंग कर देने और भारी जन-हानि के इरादे से बमबारी द्वारा बांधों का विनाश युद्ध के दौर की सामान्य रणनीति रही है। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान जर्मनी के अनेक बांधों- मोन, एडर, सॉर्पे तथा एनेप- को निशाना बनाया गया था और तो और तकरीबन 1500 उड़ानों द्वारा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तक ने उत्तरी कोरिया के सुइ-हो बांध-समूह पर हमले किए थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के समाप्त होते होते, भूकंप पैदा करने वाले बमों के विकास के साथ, ऐसी छोटी उड़ानें भले ही अप्रचलित हो गईं हों किन्तु ऐसे लक्ष्यों की भेद्यता पहले की तुलना में बढ़ गई है।

हमें बताया जाता है कि बांध का डिजाइन नेशनल कमेटी ऑन सेस्मिक डिजाइन पैरामीटर्स (NCSDP) द्वारा अनुमोदित है। किन्तु यह हमें आश्वस्त क्यों नहीं करता है? यहां दो सवाल उठते हैं। पहला, चीन में 'ज़ीपिङ्गपु बांध' द्वारा उत्प्रेरित 'वेंचुआन' भूकंप सम्बंधी हालिया अध्ययन बताते हैं कि केवल strike slip faults ही नहीं वरन दबाव या क्षेप-भ्रंश (thrust or compressional faults) भी जलाशय-जनित भूकंपों का परिणाम प्रस्तुत कर सकते हैं। पंचेश्वर के आस-पास इन दोनों प्रकार के भ्रंशों की उपस्थिति है। दूसरा, ऐसी कोई नजीर मौजूद नहीं है कि इतने बड़े आकार के किसी बांध ने 8.6 पैमाने के भूकंप को झेल लिया हो। ऐसे में NCSDP के अनुमोदन की वजह साफ नहीं होती। तीसरा, ये सभी एक ही तो हैं। NCSDP का गठन, पंचेश्वर की परिकल्पना और प्रस्ताव करने वाले, केंद्रीय जल आयोग (CWC) के अंतर्गत किया गया है। दोनों के शीर्ष पर एक ही अध्यक्ष है। वैप्कॉस भी उसी मंत्रालय के अधीन है। परियोजना की परिकल्पना, औचित्य, समीक्षा, और यहाँ तक कि प्रमाणन तक, सभी कुछ, एक ही संगठन के अलग-अलग हाथों का किया धरा है। केंद्रीय जल आयोग के पास मौजूद आंकड़े गोपनीय हैं, उन तक पहुँच सीमित है। संस्थाओं के इस आइसबर्ग का दृश्य अंश केवल वैप्कॉस का काम है और वह भी इसलिए

कि पर्यावरण-प्रभाव आकलन सम्बन्धी रपटों को जनता के लिए उपलब्ध रखने की अनिवार्यता है। ऐसे में जो कुछ भी सामने आता है वह आश्वस्त नहीं ही करता।

उदाहरण के लिए, वैप्कॉस, जिसने अंतिम विस्तृत परियोजना रपट और पर्यावरण-प्रभाव आकलन को संकलित लिया है, को आकलित नदी के जलीय-स्रोत के बारे में ही जानकारी नहीं है। वह इसके उद्गम के रूप में कालापानी स्थित एक चश्मे की छोटी सी धारा की बात करते हैं न कि ऊपर की ओर मौजूद अनेक विशाल हिमनदों की। वह किन्हीं अज्ञात, अस्तित्वहीन ऐसे हिमनदों, स्थलों और पर्वतों के नाम लेते हैं जो इस नदी-बेसिन में कहीं हैं ही नहीं। उनका मानना है कि महाकाली हिमालय के पार से उद्गम होने वाली नदी (antecedent river) है, जबकि वस्तुतः ऐसा है नहीं। बिना प्रयोजन ऐसी जलधाराओं का उल्लेख है जो जलधारा-वर्गीकरण की किसी ज्ञात व्यवस्था के अनुरूप नहीं हैं।

प्रवाह से ऊपर की ओर के अस्कोट अभयारण्य की वनस्पतियों का विवरण देते हुए कहा गया है कि, 'अभयारण्य में सागवान, ग्रेवेलिया और यूक्लिप्टस आदि वनस्पतियों की प्रचुरता है', जबकि उनमें से कोई भी वनस्पति यहाँ है ही नहीं। ग्रेवेलिया और यूक्लिप्टस के उन प्राकृतिक वनों के उल्लेख को तो रहने ही दीजिए, जो ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप के अतिरिक्त दुनिया में कहीं भी नहीं पाये जाते। क्या इस स्तर की योग्यता और सत्यनिष्ठा का प्रदर्शन करने वाली वैप्कॉस को 8.5 अरब डॉलर के लागत की, हजारों जीवनों को प्रभावित करने वाली परियोजना के महत्वपूर्ण विश्लेषण, डिजाइन एवं प्रभाव-आकलन का दायित्व सौंपा जा सकता है? इस दायित्व के लिए वैप्कॉस का चयन बिना कोई समुचित प्रक्रिया अपनाए, केवल नामांकन के आधार पर कर लिया गया था। उसे पहले से तैयार और नेपाल तथा भारत द्वारा परस्पर साझा की गई परियोजना रपटों को शीघ्रता से 06 महीने में "पुनरीक्षित एवं अद्यतन" कर बनाना था। पर महज एक साल के भीतर एक 'विस्तृत' पर्यावरणीय-प्रभाव आकलन पूरा किए जाने के नाम पर वैप्कॉस को 36.6 करोड़ रुपयों का भुगतान किया गया।

अभी और भी बहुत कुछ है। प्रभाव-आकलन रपट में वैप्कॉस द्वारा दी गई प्रजाति-सूची में एक ओर जहां जलग्रहण-क्षेत्र की जैव-विविधता के केवल एक छोटे से हिस्से का ही उल्लेख है वहीं दूसरी ओर ऐसे पौधों और पशुओं को शामिल किया गया है जो यहाँ होते ही नहीं। जैसे भूरे भालू, स्लोथ बेयर, मोनोक्लेड कोबरा तथा बैंडेड क्रैट्स। पौधों की सूची में केवल 193 प्रजातियों का ही उल्लेख है जबकि केवल सहायक नदी गोरी के बेसिन, जहां तक डूब क्षेत्र का फैलाव होगा, में ही 2,359 प्रजातियों, 963 जैनरा और 199 परिवारों की उपस्थिति है। भारत और नेपाल की प्रकाशित सूचियों के अनुसार महाकाली में मछलियों की 124 प्रजातियाँ पायी जाती है जबकि वैप्कॉस की रपट 30 की ही चर्चा करती है। पक्षियों की सूची में 70 प्रजातियाँ हैं जबकि ऊपर की ओर स्थित, भारत के महत्वपूर्ण पक्षी क्षेत्रों में से एक, गोरी घाटी में ही 330 पक्षी-प्रजातियों का आवास है।

समस्या केवल इतनी नहीं है कि वैप्कॉस की सूचियाँ तथा विश्लेषण अधूरा एवं अंशतः काल्पनिक है। वे दरअसल पंचेश्वर-परियोजना के संभावित दुष्प्रभावों को छिपाने या कमतर दिखाने की अधकचरी कोशिश करते हैं। एक वैज्ञानिक पर्यावरणीय आकलन की उपयोगिता आघातों और संभावित हानियों को स्पष्टता के साथ सामने रखने में होती है। वैप्कॉस इसके एकदम उलट के लिए शिद्दत से कोशिश करता दिखाई देता है। कुछ उदाहरण पेश हैं:

जलाशय में डूब जाने वाले वनों के प्रत्याशित प्रभावों के बारे में वैप्कॉस का कहना है, ''डूब-क्षेत्र और निकटवर्ती इलाके के जंगल अत्यधिक मानवीय हस्तक्षेप और अविवेकपूर्ण कटान के कारण सामान्यतः बुरी दशा (degraded) में हैं और इस बरबादी के कारण यहां कोई महत्वपूर्ण वन्य-जीवन मौजूद नहीं है। अतः परियोजना की वजह से स्थलीय-प्राणिवर्ग पर किसी प्रतिकूल प्रभाव की संभावना नहीं है।''

इस घाटी से परिचित कोई भी व्यक्ति जानता है कि यह झूठ है। गंगा की सभी सहायक नदियों में से महाकाली ही सर्वाधिक प्रचण्ड है। यह नदी एक गलियारा है, एक प्रचण्ड प्रवाह जो पर्वतीय घाटियों से होकर मैदानों तक पहुंचता है। इस पूरे प्रवाह के, अधिकांशतः, दोनों किनारों पर कोई सड़क नहीं

है। मैदानी इलाकों में यहाँ वहाँ मौजूद जंगली-पगडण्डियों और रेतीले तटों से लेकर गहन घाटी वनों से होते हुए अस्कोट वन्य-जीवन अभयारण्य तक वन्य प्राणियों, यहाँ तक कि संकट ग्रस्त बाघ (टाइगर) तक की, मौजूदगी के तमाम प्रमाण हैं। नदी के दोनों तटों के ऊंचे खड़े कगार और घने जंगल तेंदुआ, तेंदुआ बिल्ली, मछली पकड़ने वाली बिल्ली, काकड़ तथा घुरड़ के आश्रय-स्थल हैं। इनकी आबादी इतनी घनी है कि नदी के नीचे की ओर के किसी एक भ्रमण में ही किनारे के प्रत्येक बालू-तट पर आपको बाघ के पदचिन्ह मिल जाएंगे, जबकि प्रत्येक दोपहर को मैदानी इलाकों से आने वाली गर्म और बर्फीले इलाकों से अलस्सुबह आने वाली ठंडी हवाओं के झोंके इन पदचिन्हों को लगातार मिटाते रहते हैं।

वैप्कॉस बरसों से, अपने धोखेबाज पर्यावरणीय प्रभाव आकलनों एवं निम्नस्तरीय अध्ययनों के लिए कुख्यात है किन्तु इसके बाद भी उसे काम पर लगाया जाता है, विशेषतः बड़ी परियोजनाओं के प्रस्तावकों द्वारा।

क्वीतड़ से उतरते हुए महाकाली का विस्तार (फोटो: शेपा)

* * *

जोड़े गए उद्देश्य, अव्यक्त कार्यसूची और उनके प्रभाव

अपने नाम से ही 'बहुद्देशीय' पंचेश्वर बाँध-परियोजना को जलविद्युत उत्पादन के अलावा संपूरक सिंचाई और 'आकस्मिक' बाढ़ नियंत्रण का काम भी करना है। भारत में ऊर्जा के अभाव और जल विद्युत ऊर्जा के हानिरहित होने के दशकों पुराने विवरणों के निरर्थक हो जाने के बावजूद पंचेश्वर-परियोजना के सभी प्रपत्रों की प्रस्तावना में इनकी चर्चा है। हम जानते हैं कि भारत का ऊर्जा-परिदृश्य बदला है। भारत अब एक ऊर्जा अतिरेक वाला देश है। वायु एवं सौर ऊर्जा की तुलना में जल-विद्युत दूनी महंगी है और नेशनल-ग्रिड में इसे बेच सकना कठिनतर हुआ है। ऐसे में सवाल है कि भारत 5000 मेगावाट (MW) अतिरिक्त जल-विद्युत पैदा करने के लिए इतने बड़े और अभूतपूर्व पैमाने की परियोजना के निर्माण का प्रयास क्यों कर रहा है? वह भी 8.5 अरब अमेरिकी डॉलर की अनुमानित लागत से जिसके लिए उसे अंतरराष्ट्रीय महाजनों की शरण लेनी होगी। परियोजना के सहायक उद्देश्यों-संपूरक सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण-को सम्मिलित कर लेने पर भी बात वहीं रहती है। परियोजना के लागत-लाभ विश्लेषण तथा उससे कहीं अधिक जरूरी, परियोजना के विषय में जो कुछ ज़िक्र नहीं करते हैं, पर गहरी नज़र डालने से एक भिन्न परिदृश्य सामने आता है।

पंचेश्वर बहुद्देशीय बांध-परियोजना से जोड़ा गया भारत तथा नेपाल की सिंचाई-क्षमता में वृद्धि का उद्देश्य, खास तौर पर भारत के नजरिये से, अटपटा सा है। परियोजना के अंतर्गत, भारत की तरफ, अतिरिक्त सिंचाई-संरचना के निर्माण की कोई कार्य-योजना है ही नहीं। केवल मौजूदा नहर-प्रणाली से ही, शुद्ध सिंचित क्षेत्र में कोई वृद्धि न होने पर भी, उन्हीं शीतकालीन फसलों, जैसे गेहूं, तिलहन और आलू की सिंचाई में 'वृद्धि' कैसे सम्भव हो सकती है? 8.5 अरब डॉलर की परियोजना-लागत की भरपाई के आवंटन में कहा गया है कि, उदाहरण के लिए, रूपालीगाड़ बांध-समूह की लागत के 100% की भरपाई सिंचाई सम्बन्धी-लाभों और विशाल पंचेश्वर बाँध-समूह की समग्र लागत के 20%

की भरपाई काल्पनिक सिंचाई-लाभों और भविष्य में अनावश्यक हो जाने वाले बाढ़-बचाव कार्यों की संभावित बचतों से होगी। विविध कार्यसूचियों के बीच लागत के बँटवारे से बांध के औचित्य की स्थापना के अतिरिक्त, स्वाभाविक रूप से, योजनाकारों के पास इस परियोजना पर काम करने के कई अन्य कारण हैं।

उदाहरण के लिए डी.पी.आर. तथा आकलन/मूल्यांकन-रपटों में भारत की नदियों को परस्पर जोड़े जाने की परियोजना (Interlinking of Rivers Project/ IRLP) के अंतर्गत नदी जल के प्रवाह की दिशा को बदल दिये जाने के विशालकाय आयोजन से संबन्धित शारदा-यमुना लिंक का उल्लेख क्यों नहीं है? इस आयोजन के अंतर्गत टनकपुर बैराज से 10 किमी. ऊपर की ओर से महाकाली-शारदा के पानी को, 50 मीटर चौड़ी और 08 मीटर गहरी सीमेंट-कंक्रीट की विशाल नहर द्वारा 380 किमी. दूर, दिल्ली से थोड़ा ऊपर की ओर, यमुना में जल-आपूर्ति को बढ़ाने के लिए ले जाया जाना है। सतलुज/ब्यास नदी पर बने भाखड़ा-बाँध, भागीरथी-गंगा पर बने टिहरी-बाँध से लाये गए और जल्दी ही तैयार होने वाले लखवाड़ तथा रेणुका बांधों से लाये जाने वाले पानी के अतिरिक्त दिल्ली अपने तक पहुँचने वाले यमुना के सारे पानी का इस्तेमाल तो करती ही है, साथ में यमुना के भूमिगत जल को भी निचोड़ लेती है। इस सब के बाद भी दिल्ली की पानी की जरूरत पूरी नहीं होती और जो अतिरिक्त पानी लाया भी जाएगा उसे पीने से अधिक टॉयलेट की गंदगी को यमुना में फ्लश करने के काम में लगाया जाएगा। दिल्ली के बाद ये नहरें यमुना के पश्चिम की ओर मुड़कर राजस्थान और अंततः गुजरात पहुँचेंगी, और यह पानी साबरमती नदी में समा जाएगा। काली से बिलकुल वैसे ही यह पानी चुराया जायेगा जैसे नर्मदा नदी से।

कहा गया है कि संयुक्तीकरण-योजना के अंतर्गत सुदूर नदी-बेसिनों तक ले जाए गए पानी का उपयोग बड़े शहरों की घरेलू जल-आपूर्ति एवं रास्ते में पड़ने वाली फसलों की सिंचाई में होगा। मतलब है कि समग्र विवर्तित पानी उपयोग में ले आया जाएगा। यमुना तक इस पानी के पहुँचने के दौरान संभावित संचरण-हानि (transmission loss) का अनुमान 500 मिलियन घन मीटर का है, जबकि इस दौरान तय की गई दूरी नहरों की प्रायोजित दूरी का 1/5 है और

शुष्क उत्तरी राजस्थान और गुजरात में संभावित संचरण-हानि को इसमें सम्मिलित नहीं किया गया है। यदि शेष जल रहा तो वह बंगाल की खाड़ी की जगह अरब सागर में प्रवाहित होगा। मीठे पानी के ऐसे विशाल विवर्तन के नदी-मुहानों और सागर के पारिस्थितिक-तंत्र पर पड़ने वाले प्रभावों, जैसे तटीय रहवासों में लवणीयता (salinity) की वृद्धि एवं तदजनित कृषि भूमि एवं उत्पादन की हानि की पूरी तरह उपेक्षा की गई है। संयुक्तीकरण-योजना के लागत-लाभ विश्लेषण में तो नहीं ही, अन्यत्र भी इनका कोई जिक्र नहीं है।

नदी संयुक्तीकरण योजना (IRLP) के अंतर्गत शारदा-यमुना-साबरमती लिंक की व्यवहार्यता-रपट (feasibility report) पूरी की जा चुकी है। इन प्रपत्रों में पंचेश्वर परियोजना के बांधों को शारदा-यमुना लिंक को नदी संयुक्तीकरण योजना के अहम हिस्से के रूप में दर्शाया गया है। पंचेश्वर-परियोजना दरअसल शारदा-यमुना लिंक की धुरी की वह कील है, जो इस समग्र को संयोजित करती है किन्तु इसका जिक्र तक बहुद्देशीय बांध परियोजना की डी.पी.आर. और पर्यावरण प्रभाव-आकलन रपट में नहीं है।

लीपा-पोती यहीं पर है। वर्तमान में महाकाली-शारदा के 18.35 अरब घन मीटर (Billion Cubic meter/ BCM) सालाना औसत प्रवाह में से, 11.90 अरब घन मीटर, तकरीबन 65%, पहले से ही मोड़ा जा चुका है और भारत की मौजूदा सिंचाई सुविधाओं में इस्तेमाल होता है। नेपाल को वर्तमान में केवल 0.98 अरब घन मीटर या 01 अरब घन मीटर से कम उपलब्ध है। पंचेश्वर परियोजना के अंतर्गत इसे बढ़ाकर 3.07 अरब घन मीटर अथवा प्रवाह के 17%, को सिंचाई के लिए नेपाल को दिया जाना है। भारत के हिस्से को बढ़ाकर 13.80 अरब घन मीटर अर्थात प्रवाह के 75% से अधिक किया जाना है। अतः पंचेश्वर बहुद्देश्यीय परियोजना के अंतर्गत महाकाली-शारदा के प्रवाह के 92% को मौजूदा टनकपुर, बनबसा और शारदा बैराजों से जुड़े संजाल में मोड़ा जाएगा। लेकिन शारदा-यमुना लिंक परियोजना के अंतर्गत एक नये बैराज के माध्यम से, जो वर्तमान बैराजों से ऊपर की ओर बनाया जाने वाला है, 11.6 अरब घन मीटर या महाकाली-शारदा नदी के समग्र वार्षिक प्रवाह के 63 प्रतिशत पानी का दिशा परिवर्तन किया जायेगा।

'महा काली' (फोटो: थियो)

पंचेश्वर परियोजना का संचयी प्रभाव आकलन (Cumulative Impact Assessment) कैसा दिखाई देगा, अगर वह बनाया जाता- जहां महाकाली-शारदा का 92% पानी सिंचाई के लिये विवर्तित हो जाएगा और नदी में उसके वार्षिक प्रवाह का केवल 8% शेष रहेगा। जब शारदा-यमुना लिंक का निर्माण होगा, तब इसके वार्षिक प्रवाह के 55% और पानी की जरूरत पड़ेगी। अगर दोनों पंचेश्वर बांध परियोजनाओं और नदी संयुक्तीकरण योजना का औचित्य नदी के वार्षिक प्रवाह से 55% अधिक की पड़ेगी तो यह पानी कहां से आयेगा? ऐसे में क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि ऐसे कोई आकलन हैं ही नहीं। दूसरी ओर शारदा-यमुना संयुक्तीकरण परियोजना का पंचेश्वर बांध परियोजना प्रपत्रों में कहीं कोई उल्लेख नहीं है।

स्मरणीय है कि दोनों परियोजनाएं केंद्रीय जल आयोग द्वारा प्रस्तावित हैं और दोनों एक ही मंत्रालय, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा पुनर्जीवन, के अधीन हैं। ऐसे में अलग-अलग अभिकरणों द्वारा, परस्पर संपर्क के बिना, स्वतंत्र रूप से योजना-निर्माण का सवाल ही नहीं उठता। दोनों परियोजनाओं की

व्यवहार्यता-रपटें (feasibility reports) बनाई जा चुकी हैं। यहाँ तक कि वित्तीय लागतों पर भी विस्तार से काम किया जा चुका है। इसके बावजूद कि गंगा की इस सहायक नदी के तटीय राज्यों- उत्तराखण्ड, उत्तरप्रदेश, बिहार, झारखंड और बंगाल- के बीच नदी जल-बँटवारे को लेकर कोई औपचारिक समझौता नहीं है। अब नदी तट से दूर स्थित राज्यों- हरियाणा, राजस्थान और गुजरात- जिन्हें नदी संयुक्तीकरण योजना के द्वारा जोड़ा जा रहा है, के साथ भी कोई समझौता नहीं है। वर्तमान में मात्र दो तटीय राज्यों कर्नाटक और तमिलनाडु के बीच कावेरी के पानी के बँटवारे को लेकर होने वाले कटु विवादों पर एक नजर हमें बता सकती है कि भविष्य में हमारे सामने किस तरह की स्थितियाँ आने वाली हैं।

नदी संयुक्तीकरण परियोजना (IRLP) के एक अन्य संघटक के अंतर्गत गंगा की सबसे बड़ी धारा, करनाली-घाघरा, के जल-प्रवाह की भी दिशा बदली जानी है। 2014 में अपने पुत्र के साथ किए गए, महाकाली-शारदा-घाघरा-गंगा की धारा में सागर तक विस्तृत, एक नौका (kayak) अभियान के दौरान हमने धारा के तटवर्ती इलाकों के अनेक निवासियों से बातें-मुलाकातें कीं। नदी तट या जिन गाँवों, कस्बों में हम रुके, वहां के निवासियों में से किसी को भी यह सुराग नहीं था कि नदी, जिसके किनारे वह रहते हैं, उनसे छीनी जाने वाली है। वैसे भी महाकाली-शारदा पर बनबसा-बैराज एवं घाघरा की एक मुख्य नहर के साथ लोअर-शारदा बैराज के जल-द्वार दिसम्बर एवं अप्रैल के दौरान एकदम बंद रखे जाते हैं और सारा उपलब्ध पानी नहरों में डाला जाता है। केवल रिसाव ही बाकी बचता है और इस दौरान उत्तर प्रदेश के मैदानी इलाके में कई जगहों पर महाकाली-शारदा इतनी उथली हो जाती है कि बैलगाड़ी से पार की जा सकती है। नदी के ऊपरी हिस्सों में पानी की दिशा बदल दिये जाने के कारण गंगा की मुख्य धारा के कई भागों में नदी बड़ी हद तक सूखी ही रहती है और उसमें प्रदूषण का स्तर सीवर जैसा ही होता है। यह सब स्थिति उस प्रस्तावित अंतर्नदीय जल हस्तान्तरण करने के पहले है।

यह अनुमान लगा पाना कठिन नहीं है कि तथाकथित 'अतिरेक' वाले क्षेत्रों से 'कमी' वाले सुदूर नदी बेसिनों की ओर, विशाल नहरों द्वारा, अधिकाधिक

पानी का अंतरण क्या सामने लाने वाला है। क्षेत्रीय तनाव, सामूहिक विस्थापन एवं जनसंख्या-संरचना सम्बन्धी बद्लाव अपरिहार्य होंगे। कहीं कोई हिसाब नहीं है कि इन सब अंजामों को वहन कौन करेगा। क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि सीमा पार जाने वाली नदियों-सिंधु, ब्रह्मपुत्र एवं गंगा- की प्रवाह-मात्राओं से संबन्धित आंकड़े भारतीय नागरिकों की पहुँच से बाहर हैं, गोपनीय हैं। यह सब जब जल-बँटवारे की संधियों के अंतर्गत भारत से पाकिस्तान में प्रवाहित होने वाली नदियों के दैनिक प्रवाह और अंतरण सम्बन्धी आंकड़ों को 1960 से, यहाँ तक कि आपसी युद्धों के दौरान भी, साझा किया जाता है। ऐसा ही बांग्लादेश के साथ भी है, जहां समझौते के प्रपत्रों में ही सीमाओं पर प्रवाह-मात्राओं का विवरण रखा जाता है। इन आंकड़ों को गोपनीय रखे जाने का कोई अंतरराष्ट्रीय सामरिक औचित्य नहीं है क्योंकि दीर्घकालीन और सामयिक आंकड़े पहले से ही संबन्धित देशों के पास मौजूद हैं।

यह स्थानीय आंकड़े हैं, विशेषतः महाकाली जैसी अंतरराज्यीय नदी से संबन्धित, जो भारत के नागरिकों की पहुँच में नहीं हैं। यह अंतरराष्ट्रीय सीमा पर बहने वाली और दो देशों की साझा सम्पदा मानी जाने वाली नदी भी है। जाहिर है कि यह अपारदर्शिता, नदी के प्रवाह से जुड़े समुदायों के प्रति है ताकि बांध एवं नदी के पथांतरण की योजनाओं पर, संबन्धित निर्माणों के पूरा हो जाने से पहले कोई सवाल या बात-बहस न की जा सके। प्रतीत होता है कि हमने पंजाब, पाँच नदियों के आब के क्षेत्र से कुछ नहीं सीखा। यहां दशकों तक मौजूद रहे हिंसक अलगाववादी आंदोलन की जड़ में नदी-प्रवाह से असंबन्धित राज्यों को पानी दिये जाने के ही सवाल थे, और आज सिंचाई के लिए इस्तेमाल होने वाले पानी का 73% जमीन के भीतर से खींचा जाता है और यह पूरी दुनिया में भूमिगत जल-दोहन की उच्चतम दर है।

व्यापक नदी जल प्रवाहों को मोड़ने का भूमिगत जल पर भी घातक प्रभाव पड़ता है क्योंकि बाढ़ के दौरान नदी भूमिगत जल से लम्बवत जुड़ती है और हर साल भूमिगत जल में नई जान डालती है। 3 करोड़ 30 लाख कुओं और बोर वैलों से हर साल 250 घन किमी. पानी बाहर खींच लेने वाला भारत, चीन की तुलना में भी, भूमिगत जल का सर्वाधिक उपयोग करने वाला देश है। अनुमान है

की ऊपरी गंगा क्षेत्र में किसान भूमिगत जल की पुनः-पूर्ति दर (recharge rate) के 50 गुना से भी अधिक पानी को बाहर खींच लेते हैं। बाढ़-नियंत्रण के बहाने नदी जल-अंतरण में बढ़ोत्तरी भूमिगत जल के रिचार्ज में बाधा डालेगी जबकि 2050 में भूमिगत जल-दोहन के 80 से 200 प्रतिशत तक बढ़ जाने का अनुमान है। ऐसे में इस संकट को और गहराना ही है।

पंचेश्वर परियोजना का एक और उद्देश्य आकस्मिक बाढ़-नियंत्रण भी है। इस पानी की विशाल मात्रा को बांधने और मोड़ने सम्बन्धी योजना का, साफ-साफ, दिखावटी एजेंडा। प्राकृतिक बाढ़-चक्रों को अवांछनीय मानकर नियंत्रित किए जाने का विचार निश्चिततः अवैज्ञानिक है और इसे अब विश्व स्तर पर पुरातनपंथी विचार माना जाता है। लेकिन परियोजना के प्रस्तावक इसके प्रतिपक्ष में खड़े है। नदी को प्राणदायिनी कहना रूपक मात्र नहीं है। अब हम जानते हैं कि नदियां वास्तविकता में हमारे जल और भूमंडल का रक्तवाही तंत्र हैं और बाढ़ एक धड़कन, जो समग्र नदी क्षेत्र से लेकर सागर तक गाद, पोषक-तत्वों और उर्वरता का प्रसार करती है। हमें मालूम है मौसमी प्रवाह के बदलाव एक नदी के पारस्थितिकी-तंत्र का सृजन, परिवर्धन एवं पोषण करते हैं। नदी, नदीतट एवं नदी के बाढ़-मैदानों के समस्त प्राणियों का जीवन-चक्र, प्रवास तथा मौसमी-बदलावों के अनुरूप उत्तरजीविता, सभी कुछ, धीरे-धीरे विकसित हुई है। ऐसे में, स्वाभाविक रूप से प्राकृतिक-प्रवाह और तत्सम्बंधी बदलावों में अतिवादी हस्तक्षेपों के गंभीर परिणाम होंगे।

उदाहरण के लिए, पंचेश्वर से ऊपर काली नदी के प्राकृतिक प्रवाह में बदलाव के आंकड़े दिखाते हैं कि औसतन, किसी निर्दिष्ट वर्ष विशेष में, कम बहाव और मानसूनी प्रवाह का अनुपात 1:43 का रहता है। यह अनुपात एक सौ साला बाढ़-चक्र में बढ़ता है। मात्राओं का यह अंतर 1:215 तक जा सकता है, और हजार-साला बाढ़-चक्र में यह और ज्यादा होगा। बाढ़ सामान्य से विचलन मात्र नहीं है, उसका आकार एवं बारम्बारता अल्पकालीन मौसमी चक्रों और दीर्घकालीन जलवायु चक्रों से निर्धारित होती है। एक नदी के प्रवाह का बदलाव ही उसके मूल चरित्र का प्रतीक है। बाढ़-मैदानों के तमाम प्राणियों और मानवीय आबादी ने, हजारों सालों से, बाढ़-प्रदत्त एवं नवीनीकृत उपहारों के सहारे

फलना-फूलना सीखा है। खाद्य-अतिरेकों ने उप महाद्वीप और अन्यत्र की अनेक नगरीय सभ्यताओं को जन्म दिया, जो सिंधु, नील, दजला-फरात (Euphrates) और ह्वाङ्गहो (Yellow river) नदियों के किनारे स्थित थीं। आवधिक-प्राकृतिक बाढ़ को आपदा मानना भारत के लिए उतना ही नया है जितना यूरोपीय-उपनिवेशवाद एवं बाढ़-क्षेत्रों के ठीक ऊपर, शहतीरों पर टिके हल्के एवं अस्थाई घरों की जगह, स्थाई-बस्तियाँ। यह ज्वारग्रस्त इलाके में पक्के घर बनाने और ज्वार को आपदा कहने जैसा है।

पंचेश्वर-परियोजना के अंतर्गत पानी के भंडारण एवं उसको मोड़ने की

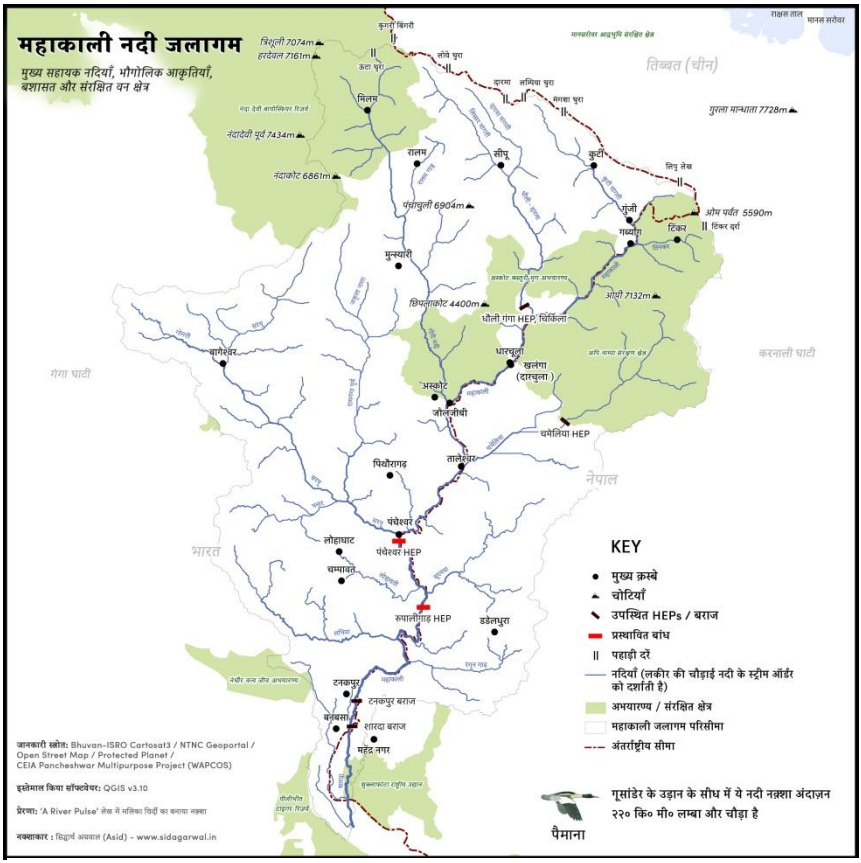

महाकाली का जलागम क्षेत्र और प्रस्तावित बांध

योजना भी अतिवादी है। लोअर शारदा कमांड एरिया में सिंचाई के लिए आवश्यक के अतिरिक्त मानसून के दौर के अनिवार्य प्रवाह को शून्य रखा गया है। अर्थात मानसून के दौरान भी सारे पानी को बांध कर सिंचाई हेतु विवर्तित किया जाना है। आशय हुआ कि, बाढ़ द्वारा इस नदी के विस्तृत बाढ़-मैदानों के पारिस्थितिकीय-तंत्र में फैले सेम दलदलों और अन्य जल-निकायों के परिवर्धन हेतु कुछ भी उपलब्ध नहीं होगा।

इसके प्रत्यक्ष परिणाम निम्नवत होंगे। महाकाली के मैदानी इलाके के प्रवेश स्थल पर स्थित रूपालीगाड़ रि-रेगुलटिंग बांध के तत्काल बाद भारत तथा नेपाल में संरक्षित क्षेत्रों के एक समूह की शुरूआत होती है। ये समूह परस्पर सम्बद्ध होने के आधार पर वन्य-जीवों को पर्याप्त रहवास उपलब्ध करा सकने के कारण एक संरक्षण इकाई की तरह सक्रिय हो पाते हैं। ये संपूरक रहवास प्रकारों के एक मिश्रण को आधार देते हैं और इस भूदृश्य पर मानव के पदार्पण से कहीं पहले से, कम से कम पिछले हिमनद-चक्र (glacial cycle) के बाद से वन्य जीवन के मौसमी परिचलन एवं फैलाव के गलियारे रहे हैं। यहाँ के टाइगर रिजर्व्स एवं राष्ट्रीय-उद्यानों में वन्य जीवन के वे रहवास हैं जिन्हें दोनों देशों में सर्वोच्च संरक्षित श्रेणी में रखा गया है। भारत की तरफ पीलीभीत टाइगर रिजर्व, किशनपुर और कटरनियाघाट वन्य जीव अभयारण्य तथा दुधवा टाइगर रिजर्व (इनमें अंतिम तीन संयुक्त टाइगर रिजर्व है)। नेपाल के इलाके में शुक्लाफांटा वाइल्ड लाइफ रिजर्व और उत्तर की ओर से दुधवा टाइगर रिजर्व से लगा बर्डिया नेशनल पार्क हैं।

देखें, यहाँ दाँव पर लगा क्या है? तथाकथित बाढ़-नियंत्रण के नाम पर मानसून के दौरान महाकाली-शारदा के प्राकृतिक प्रवाह-परिवर्तन में प्रस्तावित बदलाव अनूठे रहवासों और उनकी उत्पादकता की गंभीर क्षति, आद्र-भूमि और बाढ़-मैदानों के चरागाहों में पनपी और अतिजीविता के लिए इन्हीं पर निर्भर तमाम संरक्षित वन्य-जीवन को समाप्ति की ओर ले जाएगा। एक रहवास जो स्वयं में अनूठा है और दलदली इलाके के कतिपय विरल तथा संकटग्रस्त पक्षियों, जीवों एवं विश्व स्तर पर संरक्षण के लिए प्राथमिकता प्राप्त तराई-दुआर चरागाह पारस्थितिक तंत्र का आखिरी अवशेष है। गंभीर रूप से संकटग्रस्त

बाघ, उत्तर भारत में बारहसिंघा के बचे-खुचे आखिरी झुंड, धुर-पश्चिम में पाये जाने वाले भारतीय गैंडों की प्रजाति, हिस्पिड खरगोश, दलदलीय-तीतर और विलुप्ति के कगार पर खड़ा बंगाल फ्लोरिकन। दलदल के मगरमच्छ, नदी-कछुओं की तमाम प्रजातियों और गंगा-डॉल्फिन पर भी घातक प्रभाव होंगे। यह अकेली बांध-परियोजना पहले से ही कष्ट में पड़े उत्तरी भारत के बाघों के लिए ही नहीं वरन उत्तर में बचे बारहसिंधा के झुण्डों और बंगाल फ्लोरिकन के अंतिम पर्यावासों पर अंतिम आघात होगी। विस्मृति की ओर जा रही ये सभी अब मृतपाय प्रजातियाँ हैं।

पंचेश्वर में महाकाली (फोटो: थिओ)

* * *

अन्य नुकसान

पंचेश्वर बांध-परियोजना 31000 परिवारों को अपनी पैतृक जमीनों और घरों से निर्वासित करेगी, भारत के 114 गाँव (क्या जौलजीबी और झूलाघाट को कस्बा कहा जा सकता है, भले ही ये आंशिक रूप से डूब रहे हों?), नेपाल के 25 गाँव व एक कस्बा डूब जाएंगे। 116 वर्ग किमी. जंगल एवं कृषि भूमि, जिसका दो तिहाई भारत में है, जलमग्न हो जाएगी। महाकाली, सरयू और चमेलिया की घाटियां सारे कुमाऊँ और सुदूर पश्चिमी नेपाल की सर्वोत्तम, सर्वाधिक उपजाऊ, कृषि भूमि वाली घाटियां हैं। इन सब को ठीक उसी तरह पानी में डूब जाना है जैसे 2006 में टिहरी बांध द्वारा गढ़वाल और 1983 में पोंग बांध द्वारा हिमाचल की सर्वोत्तम कृषि भूमि को डुबा दिया गया था। पश्चिमी मध्य हिमालय के सभी चौड़ी घाटियों वाले बाढ़-मैदान, जिनके कृषि उत्पादन एक पूरे इलाके को आधार देने की क्षमता रखते हैं और जो अतीत में नगर-राज्यों एवं उनकी समृद्ध संस्कृति का पोषण करते रहे हैं, बांधों द्वारा नष्ट किए जा रहे हैं। उदाहरण के लिए उकु, बाकू, लाली, सेरा, गोकुलेश्वर, हल्दू, बिनायक और रामेश्वर के विस्तृत, सुंदर सीढ़ीदार खेत, जो हजारों सालों से जोते जाते रहे हैं बर्बाद हो जाएंगे। 3,735 हैक्टेयर कृषि भूमि का जलमग्न हो जाना अगर अर्थवान नहीं लगता तो इसे इस तरह देखिये कि हिमालय के जिस हिस्से के कुल भौगोलिक क्षेत्र का मात्र 5% ही कृषि योग्य है उससे इस अत्यंत न्यून प्रतिशत का सर्वोत्तम छीना जा रहा है।

3,735 हैक्टेयर निजी भूमि को डुबाये जाने से कहीं अधिक घातक है बड़े पैमाने पर लोगों का विस्थापन एवं निर्वासन। पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि, आवश्यक खाद की पूर्ति करने वाले पशुओं के चारे के लिए, बड़ी हद तक समीपवर्ती वन-क्षेत्र पर निर्भर करती है। वन खाद्य-प्रदार्थ, पकाने और तापने हेतु ईंधन, भवन-निर्माण सामग्री आदि जीवन निर्वाह सम्बन्धी अन्य जरूरतों की भी पूर्ति करते हैं। यह सब साझा ग्राम्य-वनों एवं चरागाहों से प्राप्त होता है और जरूरतों की समुचित आपूर्ति की दृष्टि से इन साझा संसाधन-क्षेत्रों का अनुपात गाँव की कृषि-

भूमि से चार से छह गुना अधिक होना चाहिए। ग्राम्य-वनों के न होने पर इस सब की आपूर्ति, ग्रामीणों के हक-हकूक वाले, आरक्षित वन-क्षेत्रों से होता है। परियोजना के अन्तर्गत कृषि-भूमि के अलावा 1,538 हैक्टेयर आरक्षित वन भूमि को भी यहाँ डुबाना प्रस्तावित है।

एक ओर डूब-क्षेत्र के निवासियों को बेदखल कर दिये जाने की तकलीफ होगी। दूसरी ओर जलाशय के निकटवर्ती जलग्रहण क्षेत्रों के लोगों को उनके निकट के अवशिष्ट वन-क्षेत्रों से भी 'कैचमेंट एरिया ट्रीटमेंट प्लान' के नाम पर अलग कर दिया जायेगा। 700 करोड़ रुपये इस काम के लिए अलग से रखे गए हैं और जाहिरा तौर पर इसे पहले से ही वनाच्छादित क्षेत्र में वृक्षारोपण और भू-क्षरण नियंत्रण पर खर्च किया जाना है। अनुमोदित कैचमेंट एरिया ट्रीटमेंट प्लान के प्रपत्रों पर एक नजर एक घोटाले को सामने रखती है। अभियांत्रिक उपायों के अंतर्गत मिट्टी-रोधी चैकबांध, कन्टूर बंध के निर्माण तथा काँटेदार तार-बाड़ों को लगाए जाने की योजना है।

एक मानचित्र में दर्शाई गई इस योजना के अनुसार, अन्य चीजों के अलावा, महाकाली की विविध सहायक नदियों पर 42 मिट्टीरोधी बांध बनाए जाएंगे, जिनमें से कम से कम चार ठीक हिमनदों पर होंगे। महाकाली की मुख्यधारा पर भी 07 छोटे मिट्टीरोधी बांधों के बनाए जाने की योजना है। महाकाली, जल परिमाण के आधार पर स्ट्रीम ऑर्डर 6 पर आता है तथा जिसकी एक धारा इतनी विशाल है कि उसे संसार के सबसे बड़े बांध के लिये उपयुक्त माना गया है, जिसका मानसून के दौरान का औसत प्रवाह 2,000 घन मीटर प्रति सेकंड से भी अधिक है पर चैक-डैम? चैक-डैम या मिट्टीरोधी बांध छोटे गाड़-गधेरों और मौसमी नालों पर बनाए जाते हैं विशालकाय हिमालयी नदियों पर नहीं। उनका यहाँ बनाया जा सकना तो असंभव है ही, उनमें से कोई एक मानसून भी यहाँ टिक नहीं सकेगा। उनके अनेक अनुमोदित प्रतिपूरक वृक्षारोपण एवं चरागाह विकास के कार्यस्थल वस्तुतः बर्फ में घाटी के हिमनदों से भी ऊंची जगहों पर प्रस्तावित हैं। वैप्कॉस का ऐसी योजना लेकर आना विस्मयकारक नहीं है, ज्यादा महत्वपूर्ण यह जानना है कि यह योजना पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, जिससे यह धनराशि मिलेगी, द्वारा अनुमोदित है।

उत्तराखण्ड पहले से ही नामित वन भूमि के हस्तांतरण के लिये आतुर राज्य रहा है और, 1980 से गैर-वन उपयोगों हेतु वन भूमि के हस्तांतरण के 6,000 से अधिक मामलों के साथ, ऐसा करने वाले राज्यों की सूची में सबसे ऊपर है। जहां प्रश्नगत मामले में 58 करोड़ रुपये क्षतिपूरक/प्रतिपूरक वनीकरण हेतु रखे गए हैं, वहीं ऐसी ही संरचना सम्बन्धी परियोजनाओं से 'प्रतिपूरक वनीकरण कोष प्रबंध एवं नियोजन अभिकरण' (CAMPA) द्वारा वसूली गई राशियों का संचित, किन्तु अप्रयुक्त, कोष 42,000 करोड़ रुपयों या 6.5 अरब अमेरिकी डॉलर का है। इतनी बड़ी धनराशि के अप्रयोज्य रह जाने की सबसे बड़ी वजह यह गलतफहमी है कि अधिग्रहण एवं वनीकरण हेतु गैर-वन भूमि उपलब्ध हो जाएगी। क्षरित हो गई वन भूमि क्षेत्र से दोगुने क्षेत्र में वनीकरण, एक ऐसे विभाग द्वारा जो पहले ही ऐसी क्षति के बारे में कुछ न कर पाया हो, पैसे की बरबादी से भी बुरा है।

इससे अधिक दिमाग को झकझोर देने वाला पाखण्ड और क्या हो सकता है कि हिमालय के वनविनाश की 'क्षतिपूर्ति' उत्तर प्रदेश के सुदूर मैदानों, झाँसी और ललितपुर जिलों में वनीकरण द्वारा प्रस्तावित हो। हम जानते हैं कि विविधीकृत होने और एक पारिस्थितिकी-तंत्र (ecosystem) का स्वरूप लेने में वनों को सदियाँ लगती हैं और 'प्लान्टेशन' यानी तेजी से बढ़ने वाली व्यावसायिक प्रजातियों के समूह, से उसकी तुलना नहीं की जा सकती। उसी कार्बन बाज़ार में, जोकि संयुक्त राष्ट्र द्वारा संचालित है, जहां आप जलवायु को प्रदूषित करते रहने की अनुमति खरीद सकते हैं। प्रतिपूरक वनीकरण को भी कार्बन सिंक (कार्बन को समाहित करने के लिये) के रूप में बेच-खरीद सकते हैं। यहां आपको प्राकृतिक वनों को नष्ट करके रोपित वन लगाने के लिये धन मिल सकता है। या आपको और प्रदूषण फैलाने के लिये एक कोटा मिल सकता है।

* * *

एक सभ्यता की जलसमाधि

पंचेश्वर बांध का जलाशय भारत के 770 और नेपाल के 102 मंदिरों एवं धर्मस्थलों को नष्ट करेगा। इसे एक राजनैतिक दल, जिसे केंद्र की संघ-सरकार और राज्य स्तर पर उत्तराखंड-सरकार, भारतीय जनता पार्टी, की सक्रिय स्वीकृति प्राप्त है। यह उस एक राजनैतिक दल के लिए अनूठी बिडम्बना है जिसने सोमनाथ से लेकर, 1992 में, अयोध्या के ध्वस्त मंदिरों के लिए बहुसंख्यक हिंदुओं को लामबंद किया और जिसके हिंसक दुष्परिणामों से भारत आज तक भी नहीं उभर पाया है।

ये मंदिर तमाम देवियों और देवताओं को समर्पित हैं। अपने अनेक अवतारों में शिव, केदारनाथ, मल्लिकार्जुन, लाट्टेनाथ, रामेश्वर और पंचेश्वर। देवियाँ, भवानी-भगवती-बन्नूदेवी। क्षेत्रीय और स्थानीय देवता जैसे- ब्रह्मदेव, जगन्नाथ, हुनैयनाथ, भूमिराज, साइपाल, मलयनाथ। भारत और नेपाल में कहीं के भी तमाम हिन्दू देवता, भारतीय रपटों में जिनका नाम तक दिये जाने की जहमत नहीं उठाई गई है, महज एक संख्या हैं।

किसी भी ऐसे पर्यावरणीय या सामाजिक आघात, जिसे कमतर नहीं दर्शाया जा सकता या जिसे सीधे-सीधे नकारा नहीं जा सकता, के प्रति वैप्कॉस की प्रतिक्रिया उस तरफ थोड़ा पैसा उछाल देने की रही है। आघात-प्रबंध योजना (Impact Management Plan) के अंतर्गत भारत की ओर के तीन सर्वाधिक लोकप्रिय शिव मंदिरों, पंचेश्वर, रामेश्वर और तालेश्वर, के पुनर्वास हेतु 20 करोड़ रुपए निर्धारित हैं। इन पुनर्वास बजटों में देखा जा सकता है कि इन प्राचीन एवं सुंदर मंदिरों की पुनर्स्थापना से संबन्धित उनकी खुद की कल्पना में ढाला गया है, जहां कंक्रीट के छत्रों, स्टील-बैंचों और फव्वारों की मौजूदगी है। कुल मिलाकर पंचेश्वर बांध के डूब-क्षेत्र में 872 मंदिरों और देवालयों को जलसमाधि मिलनी है और वह भी 250 मीटर तक की गहराई में।

परियोजना समर्थक भूल गए है कि ये मंदिर तथा देवालय आध्यात्मिक ऊंचाइयों की ओर ले जाने वाले उस विमुग्ध कर देने वाले भूदृश्य का हिस्सा हैं

जिसमें लोग रहते हैं। जैसे कि मोहक आकाशमुखी पर्वत-पुंजों के संकेत, दिव्य पाषाण-विवर, प्राचीन पदम तथा थुनेर के विशाल वृक्ष और दस-दस इंसानी पीढ़ियों से भी अधिक पुराने ऐसे शिलाखण्ड जिन पर दिल कुरबान किया जा सके। यह पारलौकिक विशेषताओं से अभिषिक्त देवी-देवताओं, ऐरी-आंचरी का महत्व उनके अपने स्थल पर ही है। और नदी, जो सूत्रधार है, इस समग्र भूदृश्य और इसके निवासियों को संगति देती है, पारलौकिक और लौकिक की संगति। इसीलिए देवताओं के पुनर्वास का ढोंग दरअसल इन मंदिरों को अपवित्र करना है। किसी संगमविहीन जगह पर उस पंचेश्वर मंदिर की पुनर्स्थापना किस तरह संभव है जो एक ऐसी जगह पर बना है जहां पाँच नदियों का संगम है। अपवित्र किए जाने का वास्तविक अर्थ किसी को उसके पवित्र स्वरूप से वंचित कर अपदस्थ करना ही होता है।

तालेश्वर महादेव को स्पर्श कर निकलती महाकाली (फोटो: शेपा)

* * *

क्या है इस बांध के पीछे की प्रेरणा

इस तमाम के बावजूद इस बांध परियोजना का लाभ किसे और कैसे मिलने वाला है, क्या परियोजना समर्थक इसे खींच निकाल ले जाएंगे? विकास एवं तथाकथित अतिरेक और न्यूनता के क्षेत्रों के बीच 'न्यायपूर्ण' वितरण के प्रतिरूप की तरह बांधों को पेश किए जाने के खेल और बाढ़ की शंकाओं पर नियंत्रण के अलावा व्यवस्था के भीतर एक पूरी साँठ-गाँठ की उपस्थिति है जो बे-आवाज इशारों-इशारों में, एक दूसरे को फाइदा पहुंचाते हुए, इसे संभव बना रही है। एक पूरा ईकोसिस्टम है; अंतरराष्ट्रीय महाजनों से लेकर ठेकों तथा रिश्वत की उम्मीद में सक्रिय लोगों तक विस्तृत एक पूरी खाद्य-शृंखला इंतजार में है। शृंखला के शीर्ष पर परियोजनाओं को स्वीकृत एवं बिल्डर्स तथा सीमेंट, स्टील आदि के आपूर्तिकर्ताओं के बीच ठेकों का बंटवारा करने वाले राजनीतिज्ञों एवं नौकरशाहों (विरल अपवादों को छोड़ कर) की उपस्थिति है। दलाल-सलाहकारों, ठेकेदारों, सरकारी विभागों, गाँव के स्तर पर ग्राम पंचायत, सरकारी सहायक, गैर-सरकारी संगठनों (NGO) से लेकर संसाधनों की ऐसी डकैतियों से लाभ लेने वाले ताकतवर गिरोहों तक सब हिस्सेदारी के लिए तैयार बैठे हैं।

कोई भी व्यक्ति जो पंचायती-राज की शासन-व्यवस्था और दैनिक काम-काज से परिचित है, जानता है कि यह दरअसल ठेकेदार-राज है, भ्रष्टाचार का विकेन्द्रीकरण है। यदि आप नहीं जानते तो हिमालय के मेरे इलाके की कहानी पेश है। यहाँ के ग्राम-प्रधान बताते हैं कि MNREGA तथा BADP जैसी केंद्र द्वारा वित्तपोषित योजनाओं का 15% और राज्य द्वारा वित्तपोषित योजनाओं का 25% वित्त को स्वीकृत एवं किश्त जारी करने वाली नौकरशाही के हाथों को चिकना करने में लग जाता है और तकरीबन इतना ही गाँव के बाहुबलियों की ओर बह जाता है। ऐसे में उक्त खाद्य-शृंखला में फैलने वाली उस भयानक छीना झपटी की कल्पना कीजिये जो 'विकास' के लिए बांध के अंतर्गत पंचेश्वर-परियोजना में पर्यावरणीय-प्रभावों के प्रबंध के लिए 12,237 करोड़ एवं मुआवजे और सामाजिक-आघात के प्रबंध हेतु 9,242 करोड़ रुपयों की, अलग रखी गई

राशि को लेकर होगा। इसका अधिकांश राज्य सरकार के विभागों और कुछ पंचायती-राज के द्वारा आवंटित होगा। ज्यादातर वहाँ खर्च होगा जिसे वे स्थानीय-विकास कहते हैं। नया कुछ जुड़ेगा नहीं वरन यहाँ डूब जाने वाले विद्यालयों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, सामुदायिक भवनों, जल-आपूर्ति संरचना और कुछ मंदिरों के पुनर्निर्माण में लगेगा। और यह सब स्थानीय स्तर पर ताकतवर और तयशुदा लोगों को इन ठेकों को पाने की उम्मीद जगाये रखेगा।

यद्यपि इस लूट के बंटवारे में भारी गैर-बराबरी होगी, किन्तु यह भ्रष्टाचार का विकेन्द्रीकरण है जो समूची श्रृंखला के बीच इस परियोजना की कमियों और नकारात्मक पहलुओं पर खुद चुप्पी लगाने और दूसरों से भी ऐसा ही करवाने की सहमति सृजित करता है। डूब जाने के लिए अभिशप्त गावों तक में यह साफ पता नहीं चलता कि किसने कमाया और किसने गँवाया किन्तु कमाने वाले हमारे ही बीच के लोग होते हैं। यही लोग, अक्सर, होशियारी से दी गई हिंसक धमकियों की मदद से, धरातल पर के विरोध को दबाने का काम करते हैं। यह बात समाज द्वारा समय पर समझ ली जानी चाहिये।

जौलजीबी (फोटो: शेपा)

* * *

परियोजना की आर्थिक गणना

बाढ़-नियंत्रण एवं संपूरक सिंचाई की योजनाएं, जैसा हम पहले देख चुके हैं, वस्तुतः अतिरिक्त कार्यसूची का हिस्सा हैं। इन्हें अघोषित इरादों के मुखौटों के रूप में सामने रखा गया है ताकि लागत कमतर दिखाई जा सके और मौजूदा व भावी ऊर्जा-परिदृश्य के जल-विद्युत घटक की कमजोर आर्थिकी को उचित ठहराया जा सके। उनके लागत-लाभ विश्लेषण में इस परियोजना के बांधों, जल-विवर्तनों तथा इसके जुड़वा शारदा-यमुना लिंक परियोजना के कारण होने वाली हानियों को शामिल नहीं किया गया है।

यह विश्लेषण धारा की दिशा में संभावित हानियों, जैसे बड़े पैमाने पर मछली-उत्पादन में कमी आने से आजीविका पर आघात, भू-जल स्तर में कमी के कारण निचले बेसिनों में कृषि उत्पादन की गिरावट, का जिक्र तक नहीं करता। बाढ़ पर निर्भर तटवर्ती खेती व तटों पर खारेपन या लवणता के बढ़ जाने से कृषि-भूमि की हानि का भी कोई उल्लेख नहीं है। पर्यावरण सम्बन्धी उन क्षतियों की बात तो रहने ही दीजिये जिन्हें पैसों में नहीं आँका जा सकता। इंसानी जिंदगी के मात्र डेढ़ गुना समय में जब यह बांध अपनी उपयोगिता खो चुका होगा तब इसे हटाए जाने की भारी लागत का भी कोई जिक्र वहाँ नहीं है।

विस्तृत परियोजना रपट के अनुमानों के अनुसार पंचेश्वर बहुद्देश्यीय परियोजना की लागत 33,100 करोड़ रुपये होगी, जिसका 80 प्रतिशत ऋणों से प्राप्त होगा। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के आतिफ़ अंसार, बेंट फ्लिवबर्ग एवं सहयोगियों के एक शोध-पत्र में, वैश्विक विशाल जल विद्युत परियोजनाओं सम्बन्धी सांख्यिकीय-प्रमाणों के परीक्षण के आधार पर, कहा गया है कि, ''मानव समाज और पर्यावरण पर संभावित प्रभावों को लेखे में लिए जाने से पेश्तर ही विशाल बांधों की निर्माण लागत उनके सकारात्मक प्रतिफलों से कहीं अधिक है। विशाल बांध चूंकि निर्माण में अत्यधिक समय लेते हैं परिणामतः निकट ऊर्जा संकट के समाधान की दृष्टि से निष्प्रभावी होते हैं।'' इस 'नियोजन-तर्कदोष' के संदर्भ में वे दो व्याख्याएँ सामने रखते हैं। एक 'विशेषज्ञ (सांख्यिकीविद,

इंजीनियर, अर्थशास्त्री) एवं सामान्य व्यक्ति किसी फैसले के समय, लागतों व लाभों के प्रति बेहद आशावादी नजरिया रखते हैं।' दूसरे 'आशावादी धारणायें बहुधा समय, लागतों एवं लाभों सम्बन्धी गलत बयानी के कारण अतिरंजित होती हैं।' उन्होंने पाया कि दुनिया के हर हिस्से में बनाए गए बड़े बांधों की लागत में योजनाबद्ध वृद्धि होती है। प्रत्येक चार बड़े बांधों में से तीन ने लागतों की इस वृद्धि का अनुभव किया है और औसतन यह लागत वृद्धि अनुमानित लागत से 96 प्रतिशत अधिक रही है। जब सौर एवं वायु ऊर्जा की तुलना में दुगुनी महंगी जल-विद्युत को भारतीय पावर-एक्सचेंज में बेच सकने में कठिनाई हो रही हो तो इस अति महंगी और खतरों भरी परियोजना का क्या औचित्य है?

मुमकिन है कि केवल लागत-प्रभावशीलता के नजरिये से बांधों को अमान्य ठहराना एक बड़ी बात को हमारी नजर से बचा लेता है- वह है महाजन, बिल्डर तथा इन परियोजनाओं से जुड़े राजनेता व नौकरशाह बांध निर्माण से पैसा बनाते आ रहे हैं। ''राजनीतिज्ञों और ऋण देने वालों की बांध विशेष में रुचि, अधिक से अधिक उसके जीवन काल के शुरुआती एक या दो दशकों तक ही होती है। कुछ ही राजनेता अपनी सत्तावधि से आगे की सोच रखते हैं। उन्हें बांध पसंद हैं क्योंकि वे उद्योगों व शहरों हेतु बिजली का आश्वासन देते हैं, बांधों के जल-द्वारों से उमड़ता पानी शक्ति का नाटकीय प्रदर्शन है और उद्घाटन समारोह में फीता काटने के दृश्य के लिए बाँध की पृष्ठभूमि शानदार होती है।'' भारत में मौज़ूदा दौर में बनाई जा रही विशाल स्मारक-प्रतिमाओं की ही तरह जितना विशाल उतना शानदार। लागत-प्रभावशीलता में महाजनों की भी कोई रुचि नहीं होती क्योंकि ऋणों की शुरुआत बांध के निर्माण के साथ होती है और इनके आघातों के सामने आने से पहले ही, बांध की क्रियाशीलता के कुछ ही सालों तक ये बकाया रहते हैं। प्रकृति संरक्षण हेतु अंतरराष्ट्रीय संघ (IUCN) के ग्लोबल वॉटर प्रोग्राम से जुड़े जेम्स् डैल्टन यह कहते हुए इसे सामने रखते हैं कि ''यह विज्ञान या अर्थशास्त्र पर आधारित नहीं है - यह सिर्फ राजनीति सम्मत है।''

और यह सब यहीं नहीं रुकता। इस परियोजना को आगे ले जाने के राजनैतिक मोर्चे पर और भी बहुत कुछ है।

* * *

कार्बन बाज़ार का खेल

2019 की शुरुआत में ऊर्जा सम्बन्धी संसदीय स्थाई समिति (Standing Committee on Energy) की संसद में प्रस्तुत रपट में बड़ी जल-विद्युत परियोजनाओं द्वारा उत्पादित बिजली को आगे से अक्षय-ऊर्जा (renewable energy) वर्ग में रखे जाने की सिफारिश की गई थी। इन परियोजनाओं द्वारा उत्पादित बिजली को नवीकरणीय माने या न माने जाने तथा नदी के समग्र पारिस्थितिक-तंत्र पर घातक प्रभावों के प्रश्न के अलावा, यह पुनर्वर्गीकरण दो कारणों से महत्वपूर्ण हो सकता है। जल-विद्युत को नवीकरणीय ऊर्जा माने जाने से जहां अक्षय ऊर्जा खरीद के दायित्व ('renewable purchase obligation') की पूर्ति की जद्दोजहद में लगे भारतीय राज्यों को सुविधा होगी वहीं यह जलवायु परिवर्तन से निपटने के अंतरराष्ट्रीय समझौते, पेरिस समझौते, की राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान शपथ (nationally determined contribution pledge) सम्बन्धी संकल्पना के अंतर्गत भारत को अपनी ऊर्जा-क्षमता के 40% को गैर जीवाश्म ईंधन-स्रोतों, नवीकरणीय स्रोतों, से प्राप्त करने के स्वनिर्धारित लक्ष्य की ओर ले जाने में सहायक होगा।

दिमाग को झकझोर देने वाली कार्बन-ट्रेडिंग की अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में सीमा से अधिक कार्बन उत्सर्जन करने वाले देश अन्यत्र कम उत्सर्जन वाले किसी देश से पैसों के बदले ऐसा करते रहने का अधिकार खरीद सकते हैं। जब कम प्रदूषण वाले देश ऐसी राशि को हानिकारक बांध परियोजनाओं में उपयोग करते हैं तो यह हमारी पृथ्वी को एक तरीके से हानि से बचाने के बहाने दूसरे तरीके से हानि पहुंचाने का किस्सा बन जाता है। परिणामतः चंडीगढ़ डिस्टिलर्स एंड बौटलर्स और कृष्णा निटवेर जैसे नामों वाली कंपनियाँ किसी सुदूर औद्योगिक देश से कार्बन क्रेडिट के बदले ली गई सब्सिडी के सहारे, पंचेश्वर से ऊपर स्थित घाटी में नदी और तटवर्ती जीवन का ध्वंस करते हुए, वित्तीय नजरिये से अलाभकारी जल-विद्युत परियोजनाओं का निर्माण कर सकती हैं।

* * *

भू-राजनैतिक युक्तियाँ/ दांव-पेच

यदि भू-राजनैतिक स्थिति पंचेश्वर तथा अन्य बांधों के विचार का एक पहलू है तो भारत सहज स्थिति में नहीं है। भारत के साथ पानी के बँटवारे से जुड़े सभी समझौतों को नेपाल में भेदभाव पूर्ण माना जाता रहा है और इसे लेकर वहाँ जन-विरोध रहा है। नेपाल और औपनिवेशिक ब्रिटिश सरकार के बीच शारदा-संधि (मैदान में प्रवेश के साथ महाकाली भारत में शारदा कही जाती है) पर 1920 में हस्ताक्षर हुए थे और 1996 में संशोधित महाकाली समझौते के समय, गैर-बराबरी को ठीक करने का अवसर मौजूद होने के बावजूद, हिस्सेदारी असमान ही रही। 1954 में कोसी-बराज और 1959 में गंडक-बराज बनाने सम्बन्धी समझौतों को लेकर भी रोष रहा है। दोनों भारत द्वारा वित्त-पोषित परियोजनाएं हैं और वर्तमान में भारत तथा चीन नेपाल में बड़े बांधों के निर्माण और वित्त-पोषण के लिए परस्पर प्रतियोगी हैं।

चीन के साथ, पूर्व में रद्द हो गई, 2.5 अरब अमेरिकी डालर की बूढ़ी-गंडक जल विद्युत परियोजना के नवीनीकरण की संभावना पर भारत ने नेपाल को आगाह किया है कि वह भारत द्वारा निर्मित और वित्त-पोषित बांध-परियोजनाओं के अतिरिक्त कहीं से भी बिजली की खरीद नहीं करेगा। नेपाल ने जून 2018 में चीन के साथ अनेक घोषणा-पत्रों पर हस्ताक्षर किए है जिनके अंतर्गत चीन को जलविद्युत बेच सकने के लिए नेपाल के पास ट्रांसमिशन-लाइन हो जाएगी। 2020 में नेपाल सीमा पर केरुंग में पहुँच जाने वाली तिब्बत-किंघाइ रेलवे के माध्यम से माल-परिवहन के लिए बन्दरगाह और समुद्री मार्ग नेपाल को उपलब्ध होंगे। उद्योग तथा व्यापार सम्बन्धी समझौतों के अतिरिक्त नई जल-विद्युत परियोजनाएं बनाने में चीन द्वारा वित्तीय सहयोग और सहायता दिये जाने के साथ चीन के सामरिक हितों, तिब्बत व ताइवान, के मामले से स्वयं को अलग रखने के नेपाल के नजरिये के बीच पंचेश्वर-परियोजना का भू-राजनैतिक महत्व कहाँ शेष रहा?

* * *

आखिर में

अप्रैल 2017 में महाकाली के पहाड़ी इलाके से नीचे की ओर मित्रों के साथ किए गए एक कयाक-अभियान के दौरान विशालकाय खड़ी लाइमस्टोन चट्टानों से घिरे नदी क्षेत्र में, किसी भी सड़क-संपर्क से दिनों दूर, 'नदी के टेलीग्राफ' से हमें जानकारी मिली कि एक मछुआरे ने 60 किलो वजनी महासीर पकड़ी है। यह हवा भरे टायर-ट्यूबों के सहारे, इस भँवरों से भरी तीव्र और अशांत, नदी की धारा के साथ और विपरीत तैरने वाले मछुआरों द्वारा मुंह-दर-मुंह प्रसारित होने वाली समाचार-प्रणाली है। इतनी बड़ी महासीर के बारे में पहली बार सुनने की वजह से हमारा सवाल था कि, ''उसे कैसे पता चला कि उसका वजन 60 किलो है?'' जबाब था कि, ''उसने उसे किलो के हिसाब से बेचा।'' नदी के बहाव के साथ दो दिनों के सफर के बाद संयोगवश मिले उस मछुआरे ने महाशीर के वजन की पुष्टि की। चूंकि महासीर संरक्षित प्रजाति है वह हमें यह बताने से बचा कि उसने उसका किया क्या। 60 किलो यानी 132 पाउंड से ऊपर, किसी भी ज्ञात कीर्तिमान से अधिक। किन्तु मैं कई वजहों से इसे विश्वसनीय मानता हूँ। यह मछली एक ऐसे मध्य-आयु के नेपाली मछुआरे के द्वारा पकड़ी गई जो जीविका के लिए इसके अतिरिक्त कुछ और नहीं करता और कोई शौकिया मछुआरा नहीं है कि इस रिकॉर्ड की उसके लिए कोई अहमियत हो। लंबे समय से आज तक महाकाली महासीर के लिए पूरी दुनिया के शौकिया मछुआरों का गंतव्य रहा है। एक कैप्टन एच. डब्ल्यू कैटलवैल ने पंचेश्वर से ऊपर की ओर, सरयू में मछली पकड़ने के दौरान, एक बड़ी महासीर से अपने आमना सामना होने के बारे में लिखा है। उसे प्यार से 'मेंरा दैत्य' कहते हुए वह बताते हैं कि उन्होंने उसे केवल देख कर अनुमान लगाया था कि वह 120 पाउंड वजनी रही होगी। गोल्डन महासीर पकड़ने का रिकॉर्ड किन्हीं हैमिल्टन के नाम है जिन्होंने 1822 में 09 फिट लंबी और 118 पाउंड या 54 किलो वजन की महासीर का शिकार किया था।

झूलाघाट (फोटो: शेपा)

मुख्य बात यह नहीं है कि वह मछली 60 किलो की रही होगी या नहीं, वह इस नदी के निवासियों को अपने जीवन में आम तौर पर दिखने वाली महाशीरों से निश्चिततः बड़ी थी। ऐसी कहानियाँ बहुत दूर तक नहीं जातीं क्योंकि नेपाली या कुमाऊँनी मछुआरे, अंग्रेजों की तरह, इनके देखे जाने या शिकार के वृतांत, आगामी पीढ़ियों के लिए, लिखकर नहीं रखते। मैं इस मछली के आकार की बात इसलिए कर रहा हूँ कि इससे हमें नदी के बारे में कुछ विशेष जानकारी मिलती है। गोल्डन महासीर एक प्रवासी मछली है जो हिमालय की बर्फ़ानी नदियों से हटकर स्थित स्रोतों की छोटी जलधाराओं में अंडे देती है और जाड़ा काटने के लिए नीचे मैदान की ओर सैकड़ों किमी की यात्रा करती है। मैं बहाव की दिशा में 300 किमी दूर, नदी के मैदान में उतर आने के बाद स्थित, शारदा बराज के पास एक वृद्ध मछुआरे से मिला हूँ जिसने मुझे बताया कि अपनी जवानी में उसने अक्सर वहीं महासीर का शिकार किया है।

भारत में मछली के शिकार से संबन्धित अपनी प्रसिद्ध किताब में स्कीन धू ने दिल्ली, ओखला तक यमुना में महासीर के पकड़े जाने का वर्णन किया है। 1923 में टनकपुर के पास बनबसा में अपर शारदा बैराज बनाए जाने के साथ महासीर के शीतकालीन प्रवास का निचला इलाका पूरी तरह अलग हो गया

होगा और प्रजनन के लिए पर्वतीय जल-धाराओं तक न पहुँच पाने के कारण बराज से नीचे के कमतर प्रवाह में बची-खुची महासीर आबादी एकाध दशक में पूरी तरह, शिकार में, निबटा दी गई होगी। किन्तु पहुँच-क्षेत्र के अत्यधिक सीमित हो जाने के बावजूद महाकाली के पहाड़ी इलाके में इनके परिवास बड़ी महाशीरों के लिए स्वस्थ एवं समृद्ध हैं। यहाँ तक कि न्यूनतम प्रवाह के दौरान भी उनके आश्रय के लिए पानी की पर्याप्तता और गहरे कुंडों की मौजूदगी रहती है। जाहिर है कि महाकाली और उसकी मुख्य धारा, नेपाल में करनाली-घाघरा, ऐसा परिवास उपलब्ध करा सकने में आज के दिन भी कामयाब हैं।

खाद्य शृंखला के पैमाने पर मछली की स्थिति का उसके आकार से सह-सम्बन्ध होता है। जलीय पारिस्थितिक-तंत्रों का सामान्य अनुभव रहा है कि कोई आकस्मिक एवं प्रलयकारी बदलाव, जैसे बड़ी मछलियों के प्रवास-मार्ग में बांधों और जल-विवर्तनों से उत्पन्न बाधाएँ, मछलियों का खाद्य शृंखला में उसके स्तर में गिरावट और नदी के पारिस्थितिक-तंत्र के समग्र ध्वंस की ओर ले जाता हैं। नदी और मीठे जल का पारिस्थितिक-तंत्र केवल मनुष्य की अतिजीविता और कल्याण के लिए ही नहीं वरन पृथ्वी के समग्र जीवन के लिए महत्वपूर्ण क्यों है? पर्यावरणविद नायमान तथा डडज्यन हमें याद दिलाते हैं कि मीठे पानी के रहवासों में भले ही विश्व के कुल पानी का 0.01% ही क्यों न हो और वह पृथ्वी की कुल सतह के केवल 0.8% पर ही क्यों न फैले हों, वह पादपों एवं प्राणियों की विशाल, अनुपातविहीन संख्या को शरण देते हैं। अपने अपने अति-न्यून अनुपात के बावजूद वैश्विक मत्स्य विविधता का 40%, जो कि संसार में मौजूद कशेरुकीय (vertebrate) विविधता का एक चौथाई है, का वहन करते हैं। उभयचरों (amphibians), जलीय सरिसृपों (aquatic reptiles) तथा जलीय स्तनपायियों (aquatic mammals) को भी यदि मत्स्य-विविधता में शामिल कर लिया जाए तो सभी कशेरुक प्रजातियों का एक तिहाई मीठे पानी में सिमट आता है।

खगोल जीवविज्ञानी (Astro-biologist) बताते हैं कि पृथ्वी एक जीवित ग्रह है, न कि मात्र जीवन का वहन करने वाला ग्रह। जीवन पृथ्वी के प्रादुर्भाव (evolution) और व्यवहार का अनिवार्य अंश है। हवा, जिसमें हम सांस लेते हैं,

को जीवन ही प्राणवायु का स्वरूप देता है। ओजोन परत द्वारा रक्षित वायुमंडल, हमारा रक्षात्मक आच्छादन जो पृथ्वी पर समग्र जीवन को संभव बनाता है, अप्रत्यक्षतः जीवन से ही आधार पाता है। एक परिपक्व जीवमंडल (Biosphere) जटिल जीवमंडल होता है और मानवीय हस्तक्षेप के कारणवश प्रजाति-विलुप्ति , ब्रह्मांडीय-कालक्रम में विकसित हो पाने वाली इसकी समृद्धि और जटिलता को ध्वस्त कर देता है।

भारत के लिए किसी ऐसी योजना की कल्पना कर पाना कठिन है जो पंचेश्वर बांध-परियोजना से अधिक बड़ा सामरिक खतरा हो। यह हमारी सभ्यता, जीवन-आधार व्यवस्थाओं, सामूहिक समृद्धि, जनतंत्रीय ताने-बाने और हाँ, हमारी राष्ट्रीय सुरक्षा की अनदेखी करता है। इस परियोजना से सबसे बड़ा और प्रत्यक्ष खतरा गंगा नदी-तंत्र और इस पर निर्भर समग्र जीवन को है। भारत में बहने वाली गंगा की सभी सहायक नदियों में से महाकाली-शारदा ही अभी तक अक्षत है और न्यूनतम बांधी गई है। प्रजातियाँ, अपवाद स्वरूप ही, अकेले विलुप्त होती हैं, विशेषतः जब रहवास की क्षति उत्तरदायी कारण हो और एक जीवित पारिस्थितिक-तंत्र, जो कि नदियाँ हैं, के मृत हो जाने पर परस्पर गुंथा एक जीवन-जाल, उप-महाद्वीपीय पैमाने पर नष्ट हो जाता है। जिस तरह हम पृथ्वी के कुछ हिस्सों को, अभयारण्यों और राष्ट्रीय प्राणि-उद्यानों के रूप में पृथ्वी की जीवनाधार प्रक्रियाओं के संरक्षण हेतु, मात्र उपभोग-उपयोगों से हटाकर रखते हैं वैसे ही हमारी धमनी-सदृश्य नदियों गंगा, महाकाली को भी स्वतंत्र और निर्बाध प्रवाह के लिए संरक्षित किया जाना चाहिए।

इसे संभव करना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है।

* * *

इमैन्यूएल थिओफ़िलस

इमैनुअल थिओफिलस (थिओ) की मां तमिलनाडु से थीं और पिता केरल से। दिल्ली में 20 फरवरी 1959 को जन्मे इस पर्वतारोही, कयाकर, शोधार्थी और सामाजिक कार्यकर्ता ने पहले दिल्ली और 1964 से 1975 तक नैनीताल में शुरूआती शिक्षा हासिल करने के बाद दिल्ली विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की। तत्पश्चात पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश/उत्तराखण्ड में नेशनल डेरी डेवलपमेंट बोर्ड के साथ ग्रामीण इलाकों में कार्य किया। यह नेशनल ट्री ग्रोअर्स कोआपरेटिव तथा फाउण्डेशन फार इकोलाजीकल सैक्यूरिटी (एफईएस) के अन्तर्गत था। आणन्द में थिओ एफईएस के मुख्य कार्यकारी रहे और फिर उस पद को छोड़ उत्तराखण्ड में काम करने लगे। लम्बे समय तक वह नदियों, उच्च हिमालयी तालों तथा मानवजीवन पर केन्द्रित पर्यावरण सम्बंधी शोधकार्यों में संलग्न रहे।

पर्वतारोही और लम्बी नदी यात्राओं के लिए चर्चित थिओ ने अनेक संस्थाओं में बतौर विजिटिंग प्रोफेसर तथा फैलो पढ़ाया भी है। इनमें विलियम्स कालेज (मेसाचुसेट्स, अमेरिका), अकेडिया यूनीवर्सिटी (कनाडा) तथा सीआईएसईडी, बंगलौर मुख्य थे।
1992 से आप सपरिवार मुनस्यारी (उत्तराखंड) में रह रहे हैं।

पहाड़

Himal Prakriti
A Trust for Nature